ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

सितम्बर २०१७ Date of Printing = 05-9-17
प्रकाशन दिनांक= 05-9-17

वर्ष ४६ : अङ्क ११
दयानन्दाब्द : १९३
विक्रम-संवत् : श्रावण-भादौ, २०७४
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११८

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व
सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओम प्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु० वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस लेख में

❑ शास्त्रार्थ	२
❑ वेदोपदेश	३
❑ शिक्षा और स्वतन्त्रता	४
❑ मुण्डकोपनिषद् की कथा	५
❑ ट्रिपल तलाक	८
❑ ओहो वह समर्पण भाव - ३	११
❑ क्या इस देश में.....	१४
❑ अब आगे क्या......	१६
❑ स्वराज्य प्राप्ति व देश	१७
❑ श्री कृष्ण का पवित्र	२०
❑ क्या कुरान.....	२२
❑ महर्षि दयानन्द.....	२४
❑ महर्षि दयानन्दाभिमत.....	२५

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण – ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

शास्त्रार्थ

विषय : क्या ईश्वर का अवतार होता है?
प्रधान : श्री मास्टर बोधराज जी
दिनांक : 20, 21 दिसम्बर सन् 1919 (दिन के दो बजे)
शास्थार्थ कर्ता : शास्त्रार्थ महारथी श्री ठाकुर अमर सिंह जी 'आर्य पथिक' वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज एवं
सनातन धर्मियों की ओर से : श्री पं. गोकुल चन्द जी शास्त्री

अगस्त २०१७ से आगे

आर्यसमाज में जब शास्त्रार्थों का युग था, तब गैर आर्यसमाजी लोग आर्यसमाज में आते व बड़े चाव से हमारी बात सुनते थे। इसी बात को ध्यान में रखकर हमारे विद्वानों के शास्त्रार्थों में से एक शास्त्रार्थ का प्रसंग यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।

-सम्पादक

"स्वसा" का अर्थ तो बहिन है, बहन को जार सब ओर से प्राप्त होता है। पर यह कौन सा अवतार सिद्ध हुआ?

"वराह" का अर्थ निरूक्त में यास्काचार्य ने "मेघ" किया है। यथा -

"वराहो मेधो भवति" निरुक्त ५-४,

राम का अर्थ किसी भाष्यकार ने भी दशरथी राम नहीं किया और न कोई और रामावतार हुआ। और न बताया। सायण, महीधर तथा उव्वट तीनों आचार्य, राम का अर्थ रात्रि का अन्धेरा और कृष्ण का अर्थ वासुदेव का पुत्र कृष्ण न करके काला रंग बताते हैं। नारद के शाप की बात आपने पूछी है। सो ध्यान देकर सुनिये और नोट करिये। शिव पुराण रुद्र संहिता २, अध्याय ३-४, श्री वेंकअेश्वर प्रेस बम्बई, भाषा टीका सहित सम्वत् १६८२ विक्रमी को प्रकाशित हुई। एक राजकन्या का स्वयंवर होना था, नारद जी ने विष्णु जी से कहा कि मेरा मुख सुन्दर बना दीजिये। जिससे राजकन्या मुझी को अपना पति वरण करे, श्री विष्णु जी ने नारद जी का मुंह वन्दर का सा बना दिया, और स्वयं स्वंयवर में जा विराजे, राजकन्या ने विष्णु जी को ही वरण कर लिया, नारद जी ने अपना मुंह जल में देखा तो वह बन्दर का सा मुख था, तो श्री नारद जी ने, विष्णु जी को शाप दिया और रुष्ट होकर बोले-

हे हरे त्वम् महा दुष्टः कपटी विश्व मोहनः।
परोत्साहं न सहसे मायावी मलिनाशयः।।६।।
शिव पुराण रुद्र संहिता २ अध्याय ४

अर्थ— हे विष्णु तुम महा दुष्ट हो, कपटी हो, विश्व को मोहने वाले हो, पराई उन्नति को तुम सहन नहीं करते हो, तुम मायावी हो, और मलिन आशय वाले हो, मैं तुम्हें शाप देता हूं, कि तुम भी अपनी स्त्री के वियोग दुःख को प्राप्त करो।

नारद के इस शाप से विष्णु जी ने राम का जन्म लिया, और अपनी स्त्री को जो रावण हरकर ले गया था, तब उसके वियोग का दुख नारद के शाप से उन्होंने भोगा। ब्रह्मा, विष्णु और शिव की निन्दा पुराणों में कहाँ है। यह आपने पूछा है। सो अति संक्षेप में बताता हूं। विस्तार से बोलने के लिए बहुत समय ही नहीं बल्कि बहुत दिन होने चाहिएं।

१. आपने शास्त्री जी श्रीमद्भगवत् को पढ़ा है,

शेष पृष्ठ २७ पर

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। – महर्षि दयानन्द

परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः। **सविता=ईश्वरः, सूर्यलोकश्च देवता।।** विराड्ब्राह्मी त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः।।

कस्मै प्रयोजनाय स यज्ञः कर्तव्य इत्युपदिश्यते।।

किस प्रयोजन के लिये उक्त यज्ञ करना चाहिए, यह उपदेश किया है।।

ओ३म्– धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वाच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि।। यजु० 1/२०।।

पदार्थः–(धान्यम्) धातुमर्हं यत् यज्ञात् शुद्धम्, रोगानाशकेन स्वादिष्ठतमेन सुखकारकमन्नं तत्। अत्र **दधातेर्यत् नुट् च।।उ. ५।४८।। अनने यत्प्रत्ययो नुडागमश्च (असि) भवति। अत्र सर्वत्र व्यत्ययः (धिनुहि)** धिनोति=प्रीणाति। **अत्र लडर्थे लोट् (देवान्)** विदुषो जीवानिन्द्रियाणि च **(प्राणाय)** प्रकृष्टमन्यते=जीव्यते येन तस्मै जीवनधारणहेतवे बलाय **(त्वा)** तत् **(उदानाय)** स्फूर्तिहेतव ऊर्ध्वमन्यते=चेष्टयते येन तस्मै जीवनधारणहेतवे बलाय **(त्वा)** तत्। **अत्र त्रिषु प्रथमार्थे मध्यमः (दीर्घाम्)** विस्तृताम् **(अनु)** पश्चादर्थे **(प्रसितिम्)** प्रकृष्टं सिनोति=बध्नात्यनया ताम् **(आयुषे)** पूर्णायुर्वर्धनेन सुखभोगाय **(धाम्)** दधामि। **अत्र छन्दसि लुङ्लङ्लिट् इति वर्तमाने लुङ लडभावश्च (देवः)** प्रकाशमानः प्रकाशहेतुर्वा **(वः)** अस्मानेतान् जगत्स्था स्थूलान् पदार्थांश्च **(सविता)** सर्वजगदुत्पादकः सकलैश्वर्य्यदातेश्वरः सूर्य्यलोको वा **(हिरण्यपाणिः)** हिरण्यस्यामृतस्य मोक्षस्य दानाय पाणिर्व्यवहारो यस्य सः। **अमृतहिरण्यम्।। श. ७।४।१।१५।।** यद्वा हिरण्यं= प्रकाशार्थं ज्योतिः पाणिर्व्यवहारो यस्य सः **(प्रतिगृभ्णातु)** प्रतिगृह्णातु प्रतिगृहणाति वा। **अत्र हृग्रहोरिति हस्य भः। पक्षे लडर्थे लोट् च (अच्छिद्रेण)** निरन्तरेण व्यापनेन प्रकाशेन वा **(पाणिना)** स्तुतिसमूहेन **(महीनाम्)** महतीनां वाचां पृथिवीनां वा। **महीति वाङ्नामसु पठितम्।। निघं. १।।११।। पृथिवी नामसु च। निघं. १।१।। (पयः)** अन्नं जलं च येन शुद्धम् **पय इत्युदकनामसु पठितम्।। निघं० १।१२। अयं मंत्रः श. १।१।५।१८-२२।** व्याख्यातः।।२०।।

सपदार्थान्वयः – यदिदं यज्ञशोधितं धान्यं धातुमर्हं यद् यज्ञात् शुद्धम्, रोगनाशकेन स्वादिष्ठतमेन सुखदातकमन्नं तद् **(असि)=अस्ति, यच्च यज्ञशोधितं पयः,** अन्नं जलं च येन शुद्धम् **(असि)=अस्ति तद् देवान्** विदुषो जीवानिन्द्रियाणि च **धिनुहि=धिनोति** धिनोति=पृणाति। **तस्माद्यथाऽहं (त्वा)=तत् प्राणाय** प्रकृष्टमन्यते=जीव्यते येन तस्मै जीवनधारणहेतवे बलाय **(त्वा)=** तद् उदानाय स्फूर्तिहेतव ऊर्ध्वमन्यते=चेष्ट्यते येन तस्मै उत्क्रमणपराक्रमहेतवे **(त्वा)=तद् व्यानाय** विविधमन्यते=व्याप्यते येन तस्मै सर्वेषां शुभगुणानां कर्मविद्याऽङ्गनां च व्याप्तिहेतवे **दीर्घां** विस्तृतां **प्रसितिं** पश्चात् प्रकृष्टं सिनोति=बध्नात्यनया ताम् **आयुषे** पूर्णाय्युर्वर्धनेन सुखभोगाय **(धाम्) = दधामि, तथैव यूयं सर्वमनुष्यास्तस्मै प्रयोजनायै तन्नित्यं धत।**

यथा योऽस्मान् हिरण्यपाणिः

हिरण्यस्याऽमृतस्य=मोक्षस्य दानाय पाणिः=व्यवहारो यस्य सः, देवः प्रकाशमानः सविता=जगदीश्वरः सर्वजगदुत्पादकः सकलैश्वर्यदातेश्वरः **अच्छिद्रेण** निरन्तरेण व्यापनेन **पाणिना** स्तुतिसमूहेन महीनां महतीनां वाचां चक्षुषे (प्रति गृभ्णातु)=प्रत्यनुगृह्णातु=प्रकृष्टतयाऽनुगतं **गृह्णाति,** **तथैव वयं तम्।**

यथा च हिरण्यपाणिः हरिण्यं=प्रकाशार्थं ज्योतिः, पाणि=व्यवहारो यस्य सः, देवः प्रकाश हेतुः, **सविता**=सूर्यलोको महीनां पृथिवीनां **चक्षुषेयच्छिद्रेण** प्रकाशनेन **पाणिना पयः** अन्नं जलं च येन शुद्धं **गृहीत्वा** **धान्यं पोषयति तं वयमपि अच्छिद्रेण पाणिना महीनां** महतीनां वाचां **चक्षुषि प्रतिगृह्णीमः**।।२०।।

भाषार्थ :– जो यह यज्ञ से शुद्ध किया हुआ **(धान्यम्)** पुष्टि कारक, रोगनाशक एवं स्वादिष्ठतम् होने से सुखकारक अन्न **(असि)** है, और जो यज्ञ से शुद्ध किया हुआ **(पयः)** शुद्ध अन्न और जल **(असि)** है वह **(देवान्)** विद्वान् लोगों और इन्द्रियों को **(धिनुहि)** तृप्त करता है। इसलिए जैसे मैं **(त्वा)** उस अन्न और जल को (प्राणाय) जीवन धारण के निमित्त बल के लिए और (त्वा) उसे **(उदानाय)** स्फूर्ति के हेतु तथा उत्क्रमण एवं पराक्रम के लिए और **(त्वा)** उसे **(व्यानाय)** सब शुभगुणों कर्म तथा विद्याङ्गों में व्याप्त होने के लिए **(दीर्घाम्)** दीर्घ **(प्रसितिम्)** दृढ़ **(आयुषे)** पूर्ण आयु की वृद्धि से सुख भोग के लिए **(धाम्)** धारण करता हूं वैसे ही तुम सब लोग उक्त प्रयोजन के लिए इसे नित्य धारण करो।

जैसे हमें जो **(हिरण्यपाणिः)** हिरण्य अर्थात् मोक्ष को देने के लिए जिसका पाणि = सब व्यवहार है वह **(देवः)** प्रकाशमान **(सविता)** सब जगत् का उत्पादक, सकल ऐश्वर्य का दाता जगदीश्वर **(अच्छिद्रेण)** निरन्तर व्याप्त **(पाणिना)** स्तुक्तियों से **(महीनाम्)** महान् वाणियों के **(चक्षुषे)** उपदेश और प्रकाश से **(प्रत्यनुगृभ्णातु)** अत्यन्त अनुग्रह करता है वैसे हम लोग भी उसकी स्तुति आदि किया करें।

और जैसे - **(हिरण्यपाणिः)** प्रकाश के लिए ज्योतिर्मय व्यवहार वाला **(देवः)** प्रकाश का निमित्त **(सविता)** सूर्य लोक **(महीनाम्)** पृथिवियों को प्रकाशित करने के लिए **(अच्छिद्रेण)** अपने प्रकाश रूप **(पाणिना)** व्यवहार से **(पयः)** शुद्ध जल ग्रहण करके धान्य को पुष्ट करता है उसे हम भी **(अच्छिद्रेण)** निरन्तर **(पाणिना)** स्तुतिरूप व्यवहार से **(महीनाम्)** महान् वाणियों के **(चक्षुषि)** प्रकाश में **(प्रतिगृह्णीमः)** ग्रहण करें।।१।२०।।

भावार्थः– अत्र लुप्तोपमालङ्कारः। ये यज्ञेन शोधिता अन्न जलवाय्ववादयः पदार्था भवन्ति, ते सर्वेषां शुद्धये, बलपराक्रमाय, दृढ़ाय दीर्घायुषे च समर्था भवन्ति, तस्मात् सर्वैर्मनुष्यैरेतद् यज्ञकर्म नित्यमनुष्ठेयम्।

तथा च परमेश्वरणेय या महती=पूज्या वाक् प्रकाशिताऽस्त्या स्याः प्रत्यक्षकरणयेश्वरनुगृहापेक्षा स्वपुरुषार्थता च कार्या।

यथेश्वरः परोपकारिणां नृणा मुपर्य्यनुग्रहं करोति तथैवास्मा भिरपि सर्वेषां प्राणिनामुपरि नित्यमनुग्रहः कार्यः।

यथाऽयमन्तर्यामीश्वरः सूर्यलोकश्चाध्यात्मीन वेदेषु च सत्यं ज्ञानं, मूर्तद्रव्याणि नैरन्तेंण प्रकाशयति तथैव सर्वैरम्माभिर्मनुष्यैः सर्वेषां सुाायाऽालिा विद्याः प्रत्यीकृत्य नित्यं प्रकाशनीयाः। ताभिः पृथिवीराज्यसुां नित्यं कार्यामिति।।१।२०।।

भावार्थ– इस मन्त्र में लुप्तोपमा अलङ्कार है। जो यज्ञ से शुद्ध किये हुए अन्न, जल और वायु आदि पदार्थ हैं वे सबकी शुद्धि, बल-पराक्रम, दृढ़ दीर्घ आयु की प्राप्ति में समर्थ होते हैं, अतः सब मनुष्यों को इस यज्ञकर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।

और-परमेश्वर ने जो यह महती=पूजा के योग्य वेदवाणी प्रकाशित की है इसको प्रत्यक्ष करने के लिए ईश्वर के अनुग्रह की अपेक्षा तथा निज पुरुषार्थ सदा करना चाहिये।

जैसे-ईश्वर परोपकारी नरों पर अनुग्रह करता है वैसे हमें भी सब प्राणियों पर नित्य अनुग्रह करना चाहिये।

जैसे-यह अन्तर्यामी ईश्वर आत्मा और वेदों में सत्य ज्ञान को और सूर्य लोकों मूर्तद्रव्यों को निरन्तर प्रकाशित करता है वैसे ही हम सब मनुष्यों को सबके सुख के लिए संब विद्याओं को प्रत्यक्ष करके उन्हें नित्य प्रकाशित करना चाहिये और उनसे पृथिवी से राज्यसुख को सिद्ध करना चाहिये।।१।२०।।

मुण्डकोपनिषद् की कथा

(उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर, मो.- 09845058310)

क्रमप्राप्त मुण्डकोपनिषद् की कथा का विवरण इस लेख में प्रस्तुत है। प्रश्न के समान, मुण्डक में भी कथा का अंश बहुत कम है, और सम्भवतः यह भी, कथा न होकर, किसी ऐतिहासिक घटना का वर्णन है।

मुण्डकोपनिषद् अथर्ववेद की शौनकी शाखा से है। इसमें ब्रह्म और उसको प्राप्त करने के मार्ग का सुन्दर उपदेश है। भारत सरकार द्वारा गर्वान्वित उपदेश **'सत्यमेव जयते'** भी इसी अपनिषद् में पाया जाता है। इसी प्रकार इसके अन्य श्लोकांश भी सुविख्यात हैं। इसके कुछ श्लोक कठोपनिषद् में भी पाए जाते हैं। उपनिषद् तीन अध्यायों में बंटा है, जिन्हें मुण्डक कहा जाता है। प्रत्येक मुण्डक में दो-दो खण्ड हैं, जिनमें कुल ६४ श्लोक हैं। अति-स्पष्ट होने से, यह उपनिषद् अवश्य ही पढ़ना चाहिए।

उपनिषद् बताता है कि देवों की जो प्रथम सृष्टि हुई, उनमें भी सबसे ज्ञानी ब्रह्मा हुआ, जो सबके कर्ता और लोकों के रक्षक हुए (सम्भवतः, उन्होंने मनुष्य-जाति को आगे बढ़ाने में योगदान दिया और धर्म के प्रवचन से सब प्राणियों की रक्षा के निमित्त हुए- यह इसका अर्थ है। इस 'ब्रह्मा' को परमात्मा-वाची 'ब्रह्म' नहीं समझना चाहिए- नपुंसकलिंग 'ब्रह्म' परमात्मा के लिए प्रयुक्त होता है, और प्रायः पुल्लिंग 'ब्रह्मा' देव-/मनुष्य-वाची होता है।) उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा को ब्रह्मविद्या दी। अथर्वा ने अंगी ऋषि को इस विद्या का पात्र बनाया। अंगी ने उस विद्या को भरद्वाज-गोत्रीय सत्यवह नामक ऋषि को दिया, जिन्होंने अंगिरा ऋषि को यह कही। इस अंगिरा के पास एक दिन शौनक नाम के प्रसिद्ध धनाढ्य व्यक्ति विधिवत् उपस्थित हुए। उन्होंने अंगिरा से जो प्रश्न पूछा, वही इस उपनिषद् को प्रसिद्ध करने के लिए पर्याप्त है। उन्होंने पूछा-

कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति।। मुण्डक. १/१/३।।

"हे भगवन् किसको जान लेने पर यह सब कुछ जान लिया जाता है (जो सब कुछ इस संसार में है और जो नहीं भी है)?" क्या विलक्षण प्रश्न है! इसी पर विचार करके मन प्रफुल्लित हो जाता है।

इस प्रश्न का उत्तर ही उपनिषद् की विषय-वस्तु है। सबसे पहले अंगिरा ने जो विद्या का दो में विभाजन किया, वह अनेकों स्थलों पर उद्धृत किया जाता है, क्योंकि ऐसा विभाजन कम ही पाया जाता है-

तस्मै स होवाच। द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति परा चैवापरा च।। १/१/४।।

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते।। १/१/५।।

अर्थात् अंगिरा ने शौनक से कहा, "दो विद्याएं जानने योग्य हैं, जिन्हें कि ब्रह्मविदों ने बताया है- एक परा, दूसरी अपरा। उनमें से अपरा (निचले स्तर की) विद्या वो है, जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष में निबद्ध है। और परा (ऊचे स्तर की) विद्या वह है, जिससे अक्षर परमात्मा तत्त्वशः जाना जाता है।" यह बहुत ही चिन्तन करने योग्य वाक्य है। हम तो यही जानते आए हैं कि, जिसको यहाँ अपरा विद्या कहा गया है, वही ब्रह्म तक पहुचाती है। ऋषि ने तो एक झटके

में उसको निम्न कोटि की विद्या में डाल दिया जो, वास्तव में, ब्रह्म तक नहीं पहुचाती। यह इसलिए है कि, इन सब ग्रन्थों का परिशीलन कर लेने के बाद भी, जिसने उपासना-समाधि नहीं की, उसने कुछ भी न जाना, न पाया-

यस्तं न वेद किमृचा करिष्यति? य इत् तद्विदुस्त इमे समासते (ऋक्० १/१६४/३६, अथर्व० ६/१०/१८)-

जिसने सब पढ़-पढ़ा कर, सब जान-समझ कर, परमात्मा को नहीं जाना, वह वेद की ऋचा से क्या कर लेगा? अर्थात् कुछ भी नहीं कर पाएगा और जिन्होंने परमात्मा को जान लिया, वे उसी में समा गए। वेदों के समान ही, मुनि भी चेतावनी देते हैं कि इन सब ग्रन्थों को पढ़कर अपने को ज्ञानी मानी, महात्मा मत समझ बैठो-

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितं मन्यमानाः।

जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।। १/२/८।।

मूढ़ लोग, अविद्या से घिरे होते हुए भी, अपने को धीर और पण्डित समझते हुए और इस कारण सब ओर से ठोकरें खाते हुए, उसी प्रकार इधर-उधर मण्डराते हैं जैसे कि एक अन्धे के द्वारा लिए जा रहे अन्धे।

इस उपनिषद् में अग्नि की लपटों को गुणानुसार विभक्त किया गया है, वो भी एक बहुचर्चित विभाजन है, परन्तु इसका वैज्ञानिक विश्लेषण अपेक्षित है-

काली कराली मनोजवा च
सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।
स्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी
लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः।। १/२/४।।

अग्नि की जिह्वारूपी, लपलपाती हुई सात लपटें बताई गई हैं- काली (रंगहीन), कराली (अति उग्र), मनोजवा (स्फूर्ति वाली), सुलोहिता (लाल रंग वाली), सुधूम्रवर्णा (धुएं के रंग वाली), स्फुलिंगिनी (अंगारों वाली) और विश्वरुची देवी (सब ओर से प्रकाशित)।

ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने के लिए उपनिषद् मार्ग बताता है-

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो
निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्
समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।। १/२/१२।।

ब्रह्म की इच्छा करने वाला ब्राह्मण अच्छे कर्मों से भी प्राप्त होने वाले स्वर्गलोक के दोषों को देखकर (पिछले श्लोक का शेष), विरक्ति को प्राप्त करे, क्योंकि जो 'अकृत' परमेश्वर है, वह कर्मों से नहीं प्राप्त होता। उसको जानने के लिए वह समित्पाणि होकर, मन में श्रद्धा भरकर, ऐसे गुरु को प्राप्त करे, जो वेदों में पारंगत हो और परमात्मा में स्थिति हो।

अन्य उपनिषदों के समान, यह उपनिषद् भी जताता है कि अच्छे कर्मों या 'निष्काम कर्मों' से मोक्ष नहीं प्राप्त होता। उसके लिए ब्रह्म का साक्षात्कार अनिवार्य है, जिसके लिए कर्म रोककर उपासना करनी पड़ती है।

आगे ऋषि कहते हैं-

धनुर्गृहीत्वौपनिषदं महास्त्रं
शरं ह्युपासानिशितं सन्धयीत।
आयम्य तद्भावगतेन चेतसा
लक्ष्यं तदेवाक्षरं सोम्य विद्धि।।२/२/३।।
प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत् तन्मयो भवेत्।।
२/२/४।।

हो सोम्य! हे प्रिय शिष्य! उपनिषदों में वर्णित महास्त्र धनु को उठाकर, उस पर उपासना से तेज किए हुए तीर को चढ़ा। भाव-विभोर मन से उसकी डोरी खींच और उस ही अक्षर को लक्ष्य कर वेध दे। इस उपमा को अगले श्लोक में वे स्वयं समझाते हैं- प्रणव धनुप है,

आत्मा तीर है, ब्रह्म को लक्ष्य कहा गया है। प्रमादशून्य होकर उस लक्ष्य को बेधना चाहिए और तीर के समान उसमें तल्लीन हो जाना चाहिए। अत्यन्त सुन्दरता से ऋषि ने पूरी उपासना की प्रक्रिया संक्षेप में कह दी!

आगे वे और परामर्श देते हैं-

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा
सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो
यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।। ३/१/५।।

वह परमात्मा सत्य से, तप से, सम्यक् ज्ञान से और नित्य ब्रह्मचर्य से प्राप्त होता है। जो यति, निरन्तर यत्न करते हुए, दोषों से रहित हो जाते हैं, वे उसको अपने शरीर के अन्दर (बुद्धि में) शुभ्र ज्योति के रूप में देखते हैं। क्योंकि-

सत्यमेव जयति नानृतं
सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा
यत्र तत् सत्यस्य परमं निधानम्।। ३/१/६।।

सत्य ही अन्ततः जीतता है, न कि झूठ। सत्य के पथ से देवों के पथ का विस्तार होता है, जिस को पार करके ऋषि-जन कामना-रहित होते हुए, वहाँ पहुँच जाते हैं, जहाँ सत्य का परम कोष है, अर्थात् परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं। सत्य का महत्व प्रायः आजकल सब भूल गए हैं और चारों ओर झूठ फैल गया है। परन्तु जिनको अपना उद्धार इष्ट है, उन्हें झूठ को अपने जीवन से उखाड़ना ही पड़ेगा...

'सत्यमेव जयते' यह प्रसिद्ध पाठ सम्यक् नहीं प्रतीत होता, प्रत्युत उपर्युक्त श्लोक में प्रयुक्त ''सत्यमेव जयति'' ही सही लगता है। प्राणिनीय व्याकरणानुसार भी 'जय' धातु में आत्मनेपद उपलब्ध नहीं है। किन ऐतिहासिक कारणों से सर्वकार द्वारा ऐसा पाठ स्वीकृत किया गया, यह मुझे ज्ञात नहीं है।

मुनि एक और अत्यन्त सुन्दर उपमा देते हैं, जो कि स्मरणीय है-

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे-
ऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद्विमुक्तः
परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।। ३/२/८।।

जैसे बहती हुई नदियाँ अपना नाम और रूप छोड़कर समुद्र में अस्त हो जाती हैं, वैसे ही जो विद्वान् मोक्ष प्राप्त करता है, वह भी अपने नाम और रूप से मुक्त होकर, उत्तमों से उत्तम, दिव्य पुरुष को प्राप्त कर लेता है।

यहाँ यह संशय हो सकता है कि यह वाक्य अद्वैत मत का मण्डन कर रहा है, क्योंकि नदी तो समुद्र में जाकर अपना अस्तित्व पूरी तरह खो देती है- क्या आत्मा भी परमात्मा में एक हो जाती है? आगे भी वे कहते हैं-

स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति
(३/२/८)

अर्थात् जो भी उस परम ब्रह्म को जान लेता है, वह ब्रह्म ही हो जाता है। नहीं, आत्मा अपना भिन्न अस्तित्व बनाए रखती है, परन्तु प्रकृति-जनित नाम और रूप को खो देती है- यह केवल कहने की आलंकारिक शैली है। तथापि वह अन्य मुक्तात्माओं से कैसे अपना वैशिष्ट्य बनाए रखती है, यह चिन्त्य है।

अन्त में पुनः कहा गया है कि यह महर्षि अंगिरा का उपदेश है, जिसे कि ब्रह्मचर्यव्रत का पालन न करने वाला नहीं समझ सकता। उनके जैसे सभी परम ऋषियों को नमस्कारपूर्वक उपनिषद् समाप्त हो जाता है।

इस प्रकार मुण्डकोपनिषद् आध्यात्मिक पथ पर चलने वालों के लिए तो आवश्यक सामग्री है ही, परन्तु वस्तुतः यह अत्यन्त सुन्दर उपनिषद् सभी अध्यात्मानुरागियों के द्वारा पठितव्य है।

❑❑

ट्रिपल तलाक और धार्मिक स्वतन्त्रता

(धर्मपाल आर्य)

अभी पिछले महीने (अगस्त) की २२ तारीख को सुप्रीम कोर्ट ने अपना एक ऐतिहासिक फैसला सुनाया जिससे पूरे देश में और खासकर मुस्लिम महिला समाज में न्यायपालिका के प्रति विश्वास व आस्था अधिक मजबूत हुई। देश के सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय ऐतिहासिक होने के साथ-साथ साहसिक भी है। दूरदर्शन के प्रायः सभी चैनलों पर इस साहसिक निर्णय को लेकर विस्तृत चर्चाओं, वादों और संवादो को देखने सुनने का अवसर मिला, अनेक अखबारों में सम्पादकीय पढ़ने को मिले, जिनमें सर्वोच्च न्यायालय के साहसिक निर्णय की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई। पाँच न्यायाधीशों (सर्वश्री जे.एस. खेहर, कुरियन जोसफ, आर.एफ. नरीमन, यू यू ललित एवं अब्दुल नजीर) की संयुक्त सुनवाई में ट्रिपल तलाक को न केवल असंवैधानिक माना, अपितु कुरान (इस्लामी धर्मग्रन्थ) की मूल भावना के भी विपरीत माना। ट्रिपल तलाक मुस्लिम महिलाओं के लिए अभिशाप बना हुआ था, जिसके कारण अंसख्यों मुस्लिम महिलाओं का जीवन नारकीय बन गया था। लगभग चौदह सौ साल पुरानी एक ऐसी कुप्रथा, जिसने समाज में भेदभाव की दीवार खड़ी कर दी थी और सम्प्रदाय के आधार पर विभाजित मुस्लिम महिलाओं पर पुरुष प्रधानता का शिकंजा कसा हुआ था सुप्रीम कोर्ट के फैसले ने एक ही झटके में भेदभाव की दीवार और पुरुष प्रधानता के मिथक को तोड़कर एक ऐतिहासिक मिसाल कायम की है। चाहे ऊधमसिंह नगर (हैमपुर) की शायरा बानो हो, चाहे सहारनपुर के मजहर हसन की बेटी अतिया सावरी हो, चाहे जयपुर की एम.बी.ए. उत्तीर्ण आफरीन हो, चाहे नवादा (बिहार) की इशरत जहाँ हो, चाहे रामपुर की गुलशन परवीन हो, चाहे लखनऊ की हिना हो, चाहे सिवान की शाहीन परवीन हो, चाहे बनारस की शबाना परवीन हो, और कर्नलगन्ज की गजाला समेत चाहे तलाक की अन्तहीन त्रासदी से त्रस्त अंसख्य महिलाएं हों, उन सबको इस निर्णय ने राहत के साथ-साथ-सम्मान व स्वाभिमान- पूर्वक जीवन जीने का साहस प्रदान किया है। १९८५-८६ का वह त्रासदी भरा दौर था, जब शाहबानो ने पारिवारिक प्रताड़ना के साथ-साथ राजनीतिक अन्याय को झेला और बिना न्याय पाए ही इस दुनिया से चल बसी। काशीपुर (हैमपुर) की शायराबानो को परिवार में प्रताड़ना से जब गुजरना पड़ा, तो उसने हिम्मत नहीं हारी और सन् २०१५ में काशीपुर की फैमिली कोर्ट में न्याय की गुहार लगाई तो पति ने तीन तलाक का पत्र डाक द्वारा ससुराल भिजवा दिया। बस, यहीं से शायरा बानो और तलाक के मध्य जंग शुरू हुई। फैमिली कोर्ट में पहुँचे इस मामले को २० फरवरी २०१६ को अधिवक्ता गोपाल राव की सहमति के बाद शायराबानो ने सुप्रीम कोर्ट में पहुँचाया और लगभग डेढ़ वर्ष बाद उसका ऐतिहासिक परिणाम आया, जिसमें शायरा बानो ने न केवल अपने, अपितु अपनी भाँति तलाक की त्रासदी में जी रही असंख्यों महिलाओं को न्याय दिलवाया। २२ अगस्त को जैसे ही यह निर्णय आया, तो पक्ष- विपक्ष में त्वरित प्रतिक्रियाएं आने लगीं। असरुद्दीन उवैसी ने कहा कि केवल कानून बनाने से सुधार नही होगा, अपितु समाज में जागृति की आवश्यकता है। समाजवादी पार्टी के नेता आजमखान ने कहा कि ट्रिपल तलाक पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला धार्मिक स्वतन्त्रता पर हमला है। इसके अतिरिक्त मुस्लिम रहनुमा इस निर्णय पर एकमत नहीं हैं। मुस्लिमों के दो धड़े हैं- एक बरेलवी और दूसरा देवबन्दी। देवबन्दी उक्त फैसले को शरीयत

के खिलाफ मान रहे हैं, जबकि बरेलवी ने इसका स्वागत करते हुए ट्रिपल तलाक के खिलाफ केन्द्र द्वारा कानून बनाए जाने की आशा की है। हमारे समाज की यह त्रासदी ही कही जाएगी कि जो रिवाज चाहे फिर वो सती प्रथा हो, चाहे ट्रिपल तलाक हो, चाहे बहु विवाह हो और चाहे निकाह हलाला हो इस प्रकार की कुप्रथाओं ने समाज में जिस प्रकार भेदभाव की दीवार खड़ी की, उनसे समाज में महिलाओं का जीवन यातनाओं से भर गया/ पराधीनता से जकड़ा गया और नारी होना एक अभिशाप बन गया। कोई भी कुप्रथा तब और अधिक खतरनाक बन जाती है, जब उसे धर्म का नकाब ओढ़ा दिया जाता है। धर्म की आड़ लेकर इस समाज पर धर्म के ठेकेदारों ने इस प्रकार की कुप्रथाओं को थोपकर समाज में जाति के नाम पर और लिङ्ग के आधार पर वैमनस्य पैदा किया। जबकि हमारे यहाँ शास्त्रों में कहा गया है-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रेतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।"

अर्थात् जहाँ नारियों का सम्मान होता है, वहाँ देवता निवास करते हैं। जहाँ इनका सम्मान नहीं होता, वहाँ सारी क्रियाएँ असफल होती हैं। कोई राष्ट्र, समाज, जाति व परिवार कितना सभ्य है, कितना समृद्ध है इसका अनुमान उस राष्ट्र, समाज, जाति व परिवार में महिलाओं के होने वाले सम्मान से लगाया जा सकता है। मुझे यह कहने में लेशमात्र भी संकोच नहीं कि स्वतन्त्रता से पूर्व समाज में महिलाओं की जो दशा थी लगभग वही अवस्था स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद रही। ट्रिपल तलाक अब तक हमारे गले की हड्डी क्यों बना हुआ था? इसलिए कि इस्लाम में इसको मानवीय दृष्टि से नहीं, अपितु साम्प्रदायिक दृष्टि से देखा जा रहा था, इसके बाद इसको प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष राजनीतिक संरक्षण भी मिलता रहा, जिसके कारण इस प्रकार कुप्रथा के विरुद्ध या तो आवाज उठी नहीं, यदि आवाज उठी भी तो उसने आन्दोलन का निर्णायक रूप धारण नहीं किया, यदि ट्रिपल तलाक के खिलाफ उठी आवाज ने आन्दोलन का आकार लेने की कोशिश की भी, तो उसको इस देश की वोट बैंक पर आधारित राजनीति ने तथा साम्प्रदायिक कट्टरता ने उसे आन्दोलन का रूप नहीं लेने दिया। यदि ट्रिपल तलाक को बढ़ावा देने हमारे देश की तुष्टीकरण की राजनीति ढाल रूप में आगे नहीं आती, तो १९८५ में शाहबानों को अपने वैधानिक अधिकारों को खोना नहीं पड़ता और ट्रिपल तालक आज से ३१ वर्ष पहले हलाक हो गया होता। दुर्भाग्य से आज तत्कालीन सरकार के मुखिया राजीव गाँधी और शाहबानो दोनों ही इस संसार में नहीं है यदि आज ये दोनों जीवित होते, तो शायद एक को अपनी सरकार के उस फैसले पर शर्मिन्दगी अनुभव होती, जिसके तहत राजीव गान्धी की तत्कालीन सरकार ने कोर्ट के उस फैसले को निष्प्रभावी कर दिया था जिसमें कोर्ट ने शाहबानो के पति को गुजारा भत्ता देने का आदेश दिया था। यदि शाहबानो जीवित होती, तो ट्रिपल तलाक पर आए सर्वोच्च अदालत के ऐतिहासिक निर्णय और उस ऐतिहासिक निर्णय पर वर्तमान सरकार के सकारात्मक रूख को देखकर न केवल गदगद होतीं अपितु अपूर्व सुकून का अनुभव करती और शायरा बानों को सीने से लगाकर असंख्यों आशीष देती हुई कहती कि ऐ बानो बेटी जो मैंने १९८५ में खोया था वो तुमने २२ अगस्त २०१७ में पा लिया। यह सुनकर देखकर मुझे अपूर्व आनन्द की अनुभूति हो रही है। शाहबानो प्रकरण के एकमात्र साक्षी आरिफ मुहम्मद खान हैं, जिन्होंने तत्कालीन अपनी राजीव गान्धी की सरकार के शाहबानो प्रकरण पर अपनाए गए पक्षपात-पूर्ण रवैये का जमकर विरोध किया, जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें राजीव गान्धी के मन्त्रिमन्डल से बाहर होना पड़ा। कोई भी परम्परा यदि वैमनस्य पैदा करती हो, भेदभाव का कारण बनती हो, तो केवल उसे धर्म का नकाब पहनाकर अपनाना बुद्धिमत्ता नहीं होती। राष्ट्रीय

कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने ठीक ही लिखा है-

"प्राचीन हों कि नवीन छोड़ों रूढ़ियाँ जो हों बुरी।
बनकर विवेकी तुम दिखाओ हंस जैसी चातुरी।।"

बांग्लादेश की प्रसिद्ध लेखिका तस्लीमा नसरीन सुप्रीम कोर्ट के फैसले को ऐतिहासिक बताने के साथ-साथ यह बताना भी नहीं भूली कि सुप्रीम कोर्ट ने एक झटके में तीन तलाक को खत्म कर दिया है, जिससे करीब-करीब सभी लोग मान रहे हैं कि इससे मुस्लिम महिलाओं को समान अधिकार मिल जाएगा परन्तु उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि यदि मौखिक तलाक अवैध है, तो लिखित रूप से तलाक देना वैध होगा। एक तरीके से तलाक देना संभव नहीं होगा, तो दूसरा रास्ता अख्तियार कर लेगा। तस्लीमा नसरीन की इस आशङ्का को यद्यपि सिरे से खारिज नहीं किया जा सकता, फिर भी अब एक उम्मीद जगी है कि मुस्लिम महिलाएं धर्म के नाम पर जिन कुप्रथाओं के कारण हजारों वर्षों से मानसिक, शारीरिक, पारिवारिक और सामाजिक प्रताड़नाओं को मौन होकर सहने के लिए विवश थीं, अब उन कुप्रथाओं के खिलाफ निर्णायक जंग का ऐलान हो चुका है। ट्रिपल तलाक पर सुप्रीम कोर्ट का साहसिक निर्णय अन्य कुप्रथाओं को मिटाने के लिए अथवा उन पर विजय पाने के लिए मुस्लिम महिलाओं एवं सुधारवादियों को अपूर्व संबल प्रदान करेगा। जकिया सोनम ने अपनी प्रतिक्रिया में ठीक ही तो कहा है कि एक बार में तीन तलाक खत्म होना देश की महिलाओं के लिए नई सुबह की एक किरण मात्र है पूरा उजाला मिलना अभी बाकी है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने समाज से धर्म के नाम पर, भक्ति के नाम पर, और कर्मकाण्ड के नाम पर आई असंख्यों विकृतियों को समूल नष्ट करने का शास्त्रार्थों के द्वारा, वेद प्रचार द्वारा और लेखन द्वारा अथक प्रयास किया। सभी सम्प्रदायों के प्रमुखों को ऋषिवर ने मिल-बैठकर विचार-विमर्श कर समाज में सत्यता के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता पर जोर दिया लेकिन पूर्वाग्रहग्रत मत-मतान्तरों के ठेकेदारों ने ऋषिवर के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया यदि उनकी बात को निष्पक्षता से मान लिया जाता, तो समाज से जातिवाद की, तलाक की, बहुविवाह की, निकाह हलाला जैसी समस्याएं समूल नष्ट हो गई होतीं। शायरा बानो, नाई हसन, जकिया सोनम, शाईस्ता अम्बर जैसी अनेक देवियों ने, मुस्लिम् जगत के बुद्धिजीवी वर्ग ने सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति ने, सुप्रीम कोर्ट के अभूतपूर्व फैसले ने कट्टरवादियों के और कट्टरवादी मन्सूबों पर पानी फेर दिया है। यदि बांग्लादेश ट्रिपल तलाक को खत्म कर सकता है, यदि पाकिस्तान में ट्रिपल तलाक खत्म हो सकता है, तो फिर भारतबर्ष में क्यों नहीं खत्म हो सकता है? भारत जैसा मानवतावादी, संवेदनशील, विश्वबन्धुत्व की भावना से ओत-प्रोत राष्ट्र कट्टरवादिता की आड़ में अन्याय, अत्याचार, असमानता और निर्दयता को बढ़ाने वाले रीति-रिवाजों के बोझ को अधिक समय तक नहीं ढो सकता। मैं शायराबानो, नाईश हसन शाईस्ता अम्बर, जकिया सोनम जैसी अंसख्यों देवियों के संघर्ष की, उनके संघर्ष में साथ देने वाले मुस्लिम जगत् के बुद्धिजीवियों के सहयोग की, सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति की और माननीय सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक तथा साहसिक निर्णय की मुक्त कण्ठ से सराहना करता हूँ। इन सभी के निर्णायक संघर्ष के प्रति अपना नैतिक समर्थन व्यक्त करता हूँ। धर्म सुख का, शान्ति का, आध्यात्मिक समृद्धि का, मुक्ति का और मानवता का साधन है। यदि धर्म बहु विवाह, निकाह हलाला, तीन तलाक जैसी कुप्रथाओं के चक्रव्यूह में फंस जायेगा, तो धर्म का वास्तविक स्वरूप खत्म हो जाएगा। धर्म जीवन में समाधान का साधन है। उपरोक्त कट्टरवादी परम्पराओं से धर्म समाधान नहीं, अपितु एक जटिल समस्या बन जाएगा। अन्त में मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि इस प्रकार की कुप्रथाओं की दलदल से मेरे समाज को, मेरे राष्ट्र को, मुक्ति मिले।

❑❑

ओहो! वह समर्पण भाव (3)

(राजेशार्य आट्टा,मो0:-08076985517)

प्रिय पाठकवृन्द! यजुर्वेद का मंत्र (१६-७७) कहता है कि प्रजापति परमात्मा ने झूठ में अश्रद्धा और सत्य में श्रद्धा को रखा **(अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धां सत्ये प्रजापतिः)**। ऋषि दयानन्द ने मूलशंकर के रूप में (चौदह वर्ष की अवस्था में) ही नकली शिव में अश्रद्धा व्यक्त कर दी थी। धीरे-धीरे सत्य जानते गये और असत्य में अश्रद्धा करते गये। उनका पूरा जीवन इसी मंत्र की व्याख्या है। असत्य में अश्रद्धा रखने के कारण लोगों ने उन्हें नास्तिक व अंग्रेजों का एजेन्ट तक कह डाला, पर उन्होंने अनित्य संसार को रिझाने के लिए सत्य का त्याग नहीं किया। ब्रह्मसमाजियों की सेवा, थियोसोफिकल सोसाइटी का सम्मान, काशी वालों का विष्णु अवतार घोषित करने का लालच, राणा सज्जनसिंह (एकलिंग गद्दी) का लोभ, पौराणिकों की गालियाँ, मुसलमानों व ईसाइयों (अंग्रेजों) की धमकी आदि कोई भी उन्हें असत्य पर श्रद्धा के लिए मजबूर नहीं कर सका। आर्यसमाज के नियमों में भी उन्होंने सत्य को मुख्य स्थान दिया है। और अपने अनुयायियों को कहा -**"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"**

उनके श्रद्धालु शिष्यों ने भी अपने आचार्य की परम्परा को आगे बढ़ाया। प्रस्तुत लेख में उन्हीं में से कुछ के प्रेरक प्रसंग देखते हैं-

जब पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल आर्यसमाज के सम्पर्क में आये, तो उन्होंने धूम्रपान आदि दुर्व्यसन त्याग कर सदाचार (ब्रह्मचर्य) के नियमों का दृढ़ता से पालन करना शुरू कर दिया। इनके पिता जी आर्यसमाज से चिढ़ते थे। एक दिन वे बिस्मिल जी से बोले- 'आर्यसमाजी (शास्त्रार्थ में) हार गए, अब तुम आर्यसमाज से अपना नाम कटा दो।' तब ऋषि दयानन्द के मस्ताने शिष्य ने कहा- 'आर्यसमाज के सिद्धान्त सार्वभौम हैं, उन्हें कौन हरा सकता है?'

अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिताजी जिद्द पकड़ गए कि आर्यसमाज से त्यागपत्र न देगा, तो मैं तुझे रात को सोते समय मार दूँगा, या तो आर्यसमाज से त्यागपत्र दे दे या घर छोड़ दे। ओहो! ऋषि का प्यारा भक्त केवल एक लंगोट में ही था, जब पिताजी के पैर छूकर गृह त्याग कर चला।

स्वामी श्रद्धानन्द की तरह दुर्व्यसनों को त्यागकर आर्यसमाज के दलितोद्धार, गुरुकुल प्रणाली व शुद्धि आन्दोलन को समर्पित होकर बलिदान देनेवाले भक्त फूलसिंह का देवत्व भी गजब का था। पटवारी रहते समय ली गई रिश्वत को वापस देने के लिए अपनी जमीन तक बेच दी और लगभग साढ़े चार हजार रुपये, रिश्वत देने वालों की सेवा में उपस्थित होकर ग्राम पञ्चों के सम्मुख वापस दिये।

भक्तजी ने पटवारी रहते हुए एक चमार को बेगार में न जाने के कारण पीटा था। धार्मिक भावना जगने के दस-पन्द्रह वर्ष बाद वह बूढ़ा चमार उन्हें मिल गया, तो अपना जूता उसके हाथ में देकर बोले- "मेरे बूढ़े बाप! मैंने बड़ा पाप किया था। एक बार नशे में आपको पीटा था। यह जूता लो और मेरे सिर में मारो।" वह बूढ़ा हाथ जोड़कर रोने लगा और उनसे लिपट कर बोला- "फूलसिंह पटवारी, तू तो देवता बन गया।" भक्त जी ने उसे कुछ रुपये दिये, तभी उन्हें शान्ति मिली।

१६३० ई० में भक्त जी को रोहतक में किसी सम्मेलन का स्वागताध्यक्ष बनाया गया। उस उत्सव के प्रधान महामना मालवीय जी थे। हाथी पर उनका जलूस निकाला गया। हाथी पर बैठने के लिए समस्त रोहतक निवासी सज्जनों ने भक्त जी से प्रार्थना की, परन्तु भक्त जी ने कहा- "मैं प्रायश्चित्ती हूँ, मुझे हाथी पर बैठने का हक नहीं है। ... यदि मुझ पर अधिक दबाव डालोगे, तो मैं यहाँ से चला जाऊँगा।"

मोठ गाँव (हिसार) में हरिजनों का कुआं बनवाने के लिए भक्त फूलसिंह ने २३ दिन तक अनशन किया था (सितम्बर १६४०)। कुआं बना, तो इस चर्चित अनशन से गाँधी जी भी बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने भक्त जी को दिल्ली बुलाकर डेढ़ घण्टे तक वार्तालाप किया।

(आर्य-समाज के) 'बलिदान' में लिखा है- "महात्मा जी के कहने का मुख्य सार यही था- "आप आर्यसमाज के दायरे से निकल कर मेरे प्रोग्राम के अनुसार कार्य कीजिये। समय-समय पर मैं भी आपको यथाशक्ति सहायता देता रहूँगा। इससे आप देश की अधिक सेवा कर सकेंगे।"

भक्त जी ने छल-कपट रहित सरल और सीधी सादी भाषा में उत्तर दिया- "महात्मा जी, मैं आपकी सब आज्ञाओं को मानने के लिए तैयार हू परन्तु आर्यसमाज को नहीं छोड़ सकता। क्योंकि ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज तो मेरे रोम-रोम में रम चुके हैं, वे इस जन्म में तो निकाले से भी नहीं निकल सकते।"

महानता का आदर्श रखा स्वामी श्रद्धानन्द ने- बलिदान (२३ दिसम्बर १९२६) से कुछ पहले अपने पुत्र इन्द्र विद्यावाचस्पति को आर्यसमाज का इतिहास लिखने के लिए कहा तो यह भी कहना नहीं भूले- "देखो! इतिहास लिखते समय हमारी भूलों को तिरोहित न करना। हमसे भी बड़ी-बड़ी भूलें हुई हैं।"

संन्यास की वास्तविक अवस्था कैसी होती है, इस विषय में प्रा. श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने एक संस्मरण लिखा है- दयानन्द मठ दीनानगर में महात्मा आनन्दमुनि जी से उन्होंने कहा- "मेरे पास आपका वह ऐतिहासिक चित्र है, जो शोलापुर में सत्याग्रह के दिनों के स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के साथ खींचा गया था।" तो वे झट बोले- "वह शेषराव मर गया। यह आनन्दमुनि है।"

आचार्य भगवानदेव जी (स्वामी ओमानन्द) स्वामी आत्मानन्द जी की लिखी पुस्तक 'मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प' छपवा रहे थे। प्रवन्धक श्री राजेन्द्र नारायण ने पुस्तक में छापने के लिए स्वामी जी का चित्र माँगा, तो सब ऐषणाओं को साँप की केंचुली की तरह उतार फेंकने वाले संन्यासी ने पत्र में लिखा- "चित्र देने को मन नहीं चाहता। मैं इसमें लोकैषणा की घातक झलक देखता हूँ। कृपया नाम मात्र ही पर्याप्त समझें।" चित्र के लिए दोबारा आग्रह करने पर २४ अक्तूबर, १९५० को पुनः लिखा- "मैं तो अनेक दोषों से सम्पन्न एक साधारण जीव हूँ। कपिल, कणाद आदि पूज्य महर्षियों का चित्र आज तक किसी ने उनके पुस्तकों में नहीं छापा और उनके जीवन अपने सुगन्ध से आज तक जनता के जीवनों को सुगन्धित कर रहे हैं। अतः यदि जीवन में कुछ भी गुण हुआ, तो बिना ही चित्र के किसी को कुछ लाभ पहुँच ही जावेगा, कृपया पुस्तक में चित्र न दीजिए।"

स्वामी स्वतंत्रानन्द जी ने भी अपने स्मारक के विषय में पूछे जाने पर कहा था- "यदि मैंने कोई स्मरण रखने योग्य कार्य किया है, तो वही कार्य मेरा स्मारक होगा। यदि न किया होगा, तो मेरा कोई भी स्मारक मेरी स्मृति को सुरक्षित न रख सकेगा।" (स्वतंत्रानन्द संस्मरणांक, आर्य मर्यादा, मार्च १९७३)

जब हैदराबाद का निजाम हिन्दुओं पर अत्याचार कर रहा था, तो गाँधी जी ने उसे कभी नहीं रोका, पर जब आर्यसमाज ने उसके विरुद्ध सत्याग्रह किया, तो वे बोले- "आर्यसमाज का यह सत्याग्रह बेवक्त की शहनाई है। इससे हिन्दु-मुस्लिम एकता में फूट पड़ेगी।" गाँधी जी ने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को सत्याग्रह बन्द करने का सन्देश भेजा। स्वामी जी ने इसका उत्तर यह दिया कि इतनी शक्ति लगाकर भी हम अपना मनोरथ सिद्ध न कर पाये, तो हम अन्य उपायों से स्वसिद्धि प्राप्त करेंगे, किन्तु कार्य अधूरा न छोड़ेंगे।"

१९४१ ई० में कार्तिक पूर्णिमा को गढ़ मुक्तेश्वर के प्रसिद्ध मेले में हरियाणा-उत्तर प्रदेश के किसान श्रमिक संगठन ने एक विशाल सम्मेलन का आयोजन किया। संगठन के मुखिया चौधरी हरिराम एडवोकेट आदि ने सम्मेलन का अध्यक्ष हैदराबाद सत्याग्रह के विजयी योद्धा स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को बना दिया। मेले में अध्यक्ष की शोभायात्रा निकालने के लिए सजा सजाया हाथी मंगवाया गया। श्री स्वामी जी को उस पर चढ़ाया गया। सम्मेलन के अधिकारी श्रमिक संगठन का झण्डा (जिस पर हल और तलवार का चिह्न था) स्वामी जी को पकड़ाने लगे, तो उन्होंने झण्डा लेने से मना करते हुए कहा कि मैं तो केवल एकमात्र ओ३म् के झण्डे का अनुयायी हूँ, जो सार्वभौम सत्य का प्रतीक है। जिस पर न साम्प्रदायिकता का कोई रंग चढ़ता है, न जाति-पाति की तंग दीवारें ही कोई बाधा डालती हैं। जहाँ मैं आर्य हूँ, वहाँ संन्यासी के नाते विशेष रूप से सार्वभौम सत्य का पुजारी हूँ।"

यह सुनकर सम्मेलन के अधिकारी हैरान हो गये। विचार विमर्श के बाद ओ३म् का झण्डा मंगवाया गया और पुनः स्वामी जी से निवेदन किया कि आप ओ३म्

के झण्डे के साथ छोटा झण्डा किसान श्रमिक दल का भी ले लें।

स्वामी जी ने यह सुझाव भी ठुकराते हुए कहा कि हाथी के पाँव में सबके पाँव आ जाते हैं। ओ३म् की उपस्थिति में हल और तलवार की धार के साथ प्रेम की धारा भी बहती है। मेरे अन्तरात्मा या अन्तःकरण में ओम् पताका के सिवाय दूसरे प्रतीक समाते ही नहीं।"

यह सुनकर अधिकारी गुस्से से भर गए और बोले- 'स्वामी जी, जुलूस आपका साथ न देगा।' स्वामी जी सादे भाव से बोले- 'आप लोग साथ चलें न चलें, ओ३म् का झण्डा तो मेरे साथ अवश्य रहेगा।' हाथी सहित स्वामी जी को अकेला छोड़ जुलूस का रुख मोड़ दिया गया। कुछ आर्यसमाजी जय बोलते हुए स्वामीजी के साथ चले। इधर एक बड़े महात्मा का अपमान होते देखकर साधु सम्प्रदाय में खलबली मच गई। कोई कहता जमीन हिल जाएगी, आसमान फट जाएगा, गंगा उफन पड़ेगी, ऐसे महात्मा का अपमान भगवान् सहन न करेंगे। चारों ओर से साधुओं की भीड़ जमा होने लगी। कोई रणसिंगा बजा रहा था, तो कोई लम्बी तुरही फूँक रहा था। कई घंटे घड़ियाल ही उठा लाए। साथ ही शंखों की तू तू पीपी ने भीड़ जमा कर दी। सम्मेलन वालों के जुलूस से जनता खिसकने लगी। कुछ दूर चलकर धीरे से किसानों का जुलूस समाप्त हो गया, समग्र जनता स्वामी जी के साथ जयघोष करती हुई चलने लगी। सम्मेलन वालों ने हार मानकर स्वामी जी को पुनः अपना लिया। (वही, पं० समरसिंह वेदालंकार)

एक बार दीनानगर में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कुछ कार्यकर्ता स्वामी जी की कुटिया पर आये और उनसे अपने गुरु दक्षिणा उत्सव की अध्यक्षता करने की प्रार्थना की। इस उत्सव के अवसर पर संघी भाई ध्वज की पूजा करते हैं और ध्वज को पैसे की भेंट चढ़ाते हैं। स्वामी जी ने यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी। कारण पूछने पर बोले कि मैं इसमें आर्यसमाज की हानि समझता हूँ। उन्होंने पूछा कि इससे आर्यसमाज की क्या हानि है। स्वामी जी ने कहा- **"यह मैं समझता हूँ कि क्या हानि होगी। मेरे सिद्धान्त विरुद्ध काम करने का समाज पर अच्छा प्रभाव न पड़ेगा।"**

उपरोक्त प्रसंग के समान ही स्वामी स्वतंत्रानन्द जी के शिष्य स्वामी सोमानन्द जी ने एक और घटना लिखी है- भारत विभाजन के बाद रोहतक की घटना है। नगर के दुर्गा मन्दिर में एक स्थान पर चारों ओर और ऊपर भी शीशे लगा उसमें एक योगी ने समाधि लगाई। नगर के सहस्रों नर-नारी दर्शन करने जाने लगे। मेरा भी विचार जाने का था। उसी समय दयानन्द मठ में पूज्यवर श्री स्वामी जी महाराज पधारे। एक आर्य सज्जन ने कहा- महाराज, आप भी समाधि देखने चलिये। पूज्यवर श्री आचार्य जी ने कहा- "मेरा जाना ठीक नहीं, पाखण्ड को प्रोत्साहन मिलेगा। लोग प्रमाण देंगे कि आर्यसमाज के संन्यासी भी दर्शन करने जाते हैं। इस प्रकार अन्ध परम्परा चलने लगती है।" दूसरे दिन ही योगी की पोल खुल गई जब दम घुटने पर उसने संकेत करके चौखटे के एक कोने में सुराख करवाया।

एक बार आर्यसमाज चौक प्रयाग के सभासदों में मतभेद होकर दो दल बन गये। उसे मिटाने के लिए दोनों दलों के सदस्य पं० गंगाप्रसाद उपाध्यायजी के पास गये और उनसे प्रधान बनने के लिए प्रार्थना करने लगे, तो पं० जी ने कहा- ''मैं तो वर्षों से पदमुक्त रहकर ही सेवा का निश्चय कर चुका हूँ।" यह कहकर कहीं बाहर चले गये। वापस लौटने पर पता चला कि उनके बेटे श्री विश्व प्रकाश को ही प्रधान बना दिया है, तो दार्शनिक विद्वान् ने सभासदों से पूछा- "प्रधान बड़ा अथवा प्रधान का पिता।" अर्थात् तुम तो मुझे आर्यसमाज का प्रधान बना रहे थे, अब तो मैं प्रधान का पिता बन गया हूँ।

पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय जी वैदिक धर्म प्रचार के लिए केरल गये। चैंगन्नूर नगर में उनके जलूस के लिए लोग हाथी लाये। पूज्य उपाध्याय जी ने हाथी पर बैठने से यह कहकर मना कर दिया कि यहाँ तो लोग निर्धनता के कारण ईसाई बन रहे हैं और आप मुझे हाथी पर बिठाकर यह दिखाना चाहते हैं कि मैं धनी मानी व्यक्ति हूँ या मेरा समाज बड़ा साधन-सम्पन्न है।" लौकेषणा से दूर उपाध्याय जी पैदल चलकर ही नगर में प्रविष्ट हुए।

हम तो बिक जाते हैं, उन अहले-करम के हाथों।
करके अहसान भी जो नीची नजर रखते हैं।।

(क्रमशः)

❑❑

क्या इस देश में बहुसंख्यक होना अपराध है?

(डॉ० विवेक आर्य, मो०:-08076985517)

आजकल हामिद अंसारी, पूर्व उपराष्ट्रपति का अपने विदाई भाषण में दिया गया बयान कि भारत में मुस्लिम भयभीत हैं, चर्चा में है। उनका यह बयान कांग्रेस की अल्पसंख्यक के नाम पर बरगलाने की पुरानी नीति का अनुसरण मात्र है। भारत के मुसलमानों को इतना भयभीत करो कि वह सेकुलरता के नाम पर कांग्रेस को वोट करे। उनकी इसी नीति का परिणाम यह निकला कि देश के हिन्दुओं ने संगठित होकर भाजपा को वोट दिया। जिससे कांग्रेस की बुरी दशा हो गई। इस लेख का उद्देश्य राजनीति नहीं, अपितु यह दर्शाना है कि मुसलमानों को रिझाने के नाम पर हमारे राजनेताओं ने क्या-क्या किया। पढ़ने वालों की आँखें खुल जाएंगी। हमारे संविधान में मुसलमान, ईसाई, सिख, जैन, बौद्ध और पारसी को मुख्य रूप से अल्पसंख्यक माना गया है। यह परिभाषा गलत है। कश्मीर और उत्तरपूर्वी राज्यों में हिन्दू अल्पसंख्यक हैं। फिर भी उसे कोई अल्पसंख्यक वाली सुविधा नहीं मिलती, जबकि एक मुसलमान को कश्मीर में और एक ईसाई को नागालैंड में बहुसंख्यक होते हुए भी सभी अल्पसंख्यक वाली सुविधाएँ मिलती हैं। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि अल्पसंख्यक के नाम पर मलाई केवल गैर हिन्दुओं के लिए हैं। पाठक सोच रहे होंगे कि मैं इसे मलाई क्यों बोल रहा हूँ। आप पढ़ेंगे, तो आपकी आँखें खुली की खुली रह जाएंगी।

अल्पसंख्यक के नाम पर सुविधा की सूची

१. एक हिन्दू अगर कोई शिक्षण संस्थान खोलता है, तो उसे उस संस्थान की २५% सीटों को अल्पसंख्यक वर्ग के लिए आरक्षित रखना होता है, जहाँ पर अल्पसंख्यक वर्ग को नाम मात्र की फीस देनी होती है। जबकि हिन्दू छात्रों को भारी भरकम फीस देनी पड़ती है। अर्थात् अल्पसंख्यक को हिन्दू अपने जेब से पढ़ाता है।

२. किसी भी अल्पसंख्यक को शिक्षण संस्थान खोलने के लिए सरकार ९५% तक आर्थिक सहयोग करती है, जबकि किसी हिन्दू को अपने संस्थान को खोलने के लिए आसानी से लोन तक नहीं मिलता। अल्पसंख्यक संस्थान sc/st/obc के अनुपात में शिक्षकों की भर्ती के लिए किसी भी प्रकार से बाध्य नहीं है। जबकि एक हिन्दू संस्थान को सरकारी नियम के अनुसार अध्यापकों की भर्ती अनुपात में करनी होती है। अर्थात् किसी भी मुस्लिम या ईसाई संस्थान के १००% शिक्षक मुस्लिम या ईसाई हो सकते हैं। वहाँ पर कोई भी हिन्दू शिक्षक कभी नौकरी पर रखने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। यह सरकारी सुविधा National Commissioner for Minority Education Institutions (NCMEI) के अन्तर्गत सरकार द्वारा दी जाती है। UPA सरकार के कार्यकाल में हजारों मुसिलम या ईसाई संस्थानों को अनुमति दी, जबकि हिन्दू संस्थाओं को अनुमति के लिए दफ्तरों के चक्कर काटने पड़े।

३. २०१४-२०१५ में ७,५०,००० अल्पसंख्यक छात्रों को कक्षा पहली से दसवीं तक ११०० करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिया गया।

४. इसी काल में ११वीं से पीएचडी तक ६०५६२० अल्पसंख्यक छात्रों को ५०१ करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिया गया।

५. इसी काल में टेक्निकल शिक्षा के लिए १३८७७० अल्पसंख्यक छात्रों को ३८१ करोड़ रूपये छात्रवृत्ति के रूप में दिया गया।

६. अल्पसंख्यक छात्रों को प्रोफेशनल कोर्स की कोचिंग के लिए १५०० से ३००० रुपये का अनुदान दिया गया। वर्तमान सरकार ने यह अनुदान दुगुना कर दिया है।

७. २०१५-२०१६ में मौलाना आजाद राष्ट्रीय फैलोशिप के नाम पर ७,५०,००० अल्पसंख्यक छात्रों को पीएचडी और एम.फिल के लिए ५५ करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिया गया।

८. UPSE और SPSC के prelim में प्रवेश पाने पर ५०००० से २५०००० रुपये तक का सहयोग अल्पसंख्यक छात्रों को दिया गया।

९. पढ़ो-पढ़ाओ अभियान के अंतर्गत विदेश में शिक्षा के लिए पीएचडी और Mphil के लिए ५५ करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिये गये।

१०. नई मंजिल अभियान के अंतर्गत मोदी सरकार ने मदरसों में पढ़ने वाले २५००० बच्चों की शिक्षा के लिए १५५ करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिये गये।

११. बेगम हजरत महल छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत कक्षा ११वीं और १२वीं की ४८००० छात्राओं को ५७ करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिये गये।

१२. बैंक से लोन व्यवस्था में भी अल्पसंख्यक को विशेष अधिकार प्राप्त है। रोजगार के लिए ३० लाख तक लोन केवल ८% (पुरुषों के लिए) और ६% (महिलाओं के लिए) दिया जाता है।

१३. शिक्षा लोन व्यवस्था में भी अल्पसंख्यक को विशेष अधिकार प्राप्त है। प्रोफेशनल शिक्षा के लिए देश में २० लाख और विदेश में ३० लाख का लोन केवल ४% (छात्रों के लिए) और २% (छात्राओं के लिए) दिया जाता है।

१४. इसके अतिरिक्त अल्पसंख्यक युवाओं को Vocational Training Scheme, Marketing Assistance Scheme, Mahila Samridhi Yojana and Grant in Aid Assistance Scheme आदि योजनाओं के अंतर्गत विशेष लाभ दिया जाता है।

१५. जिन जिलों में अल्पसंख्यक की जनसंख्या २०% से ऊपर है। उन्हें विशेष रूप से धन दिया जा रहा है। एक जिले में अगर कोई बलॉक ऐसा है, जिसमें २५% से अधिक अल्पसंख्यक की जनसंख्या है। तो वे भी इस सुविधा के अंतर्गत आते हैं। ऐसे देश में ७१० ब्लॉक और १९६ जिलों का चयन केंद्र सरकार द्वारा १२वीं पञ्चवर्षीय योजना के अंतर्गत किया गया है। इन जिलों पर सरकार अल्पसंख्यक विकास के नाम पर हर वर्ष १००० करोड़ रुपये खर्च करती है। सोचिये अगर हिन्दू बहुल गरीब पिछड़ा हुआ जिला या ब्लॉक है, तो उसे केवल हिन्दू होने के कारण यह लाभ नहीं मिलेगा।

१६. सीखो सिखाओ, उस्ताद, नई रोशनी, हमारी धरोहर अल्पसंख्यक महिलाओं और वक्फ बोर्ड के लिए विशेष रूप से चलाई गई योजनाएं है।

१७. हिन्दुओं को इस प्रकार की किसी योजना का कोई लाभ नहीं मिलता। इसके विपरीत सरकार द्वारा हर समृद्ध और बड़े हिन्दू मंदिरों का अधिग्रहण कर लिया गया है। वहाँ से प्राप्त होने वाला धन और दान सरकार अपने कोष में पहले जमा करती है। फिर उसी धन को ईसाई चर्च ओर मस्जिद-मदरसों के विकास पर खर्च करती है। ईसाई चर्च और मदरसों को विदेशों से मिलने वाले धन पर सरकार का कोई हक नहीं है। क्यूंकि अल्पसंख्यक से जुड़े मामलों में सरकार हस्तक्षेप नहीं करती।

१८. हिन्दुओं के मनोबल को तोड़ने के लिए जल्लिकट्टू, दही-हांडी, होली, दिवाली आदि पर सरकार अपना हस्तक्षेप करना हक समझती है। जबकि बकरीद पर लम्बी चुप्पी धारण कर लेती है। क्यूंकि अल्पसंख्यक से जुड़े मामलों में सरकार हस्तक्षेप नहीं करती।

१९. हज़ यात्रा पर दी जाने वाले सब्सिडी पहले ५०० करोड़ थी, जिसे अटल बिहारी जी की सरकार ने १००० करोड़ कर दिया था। जबकि अमरनाथ आदि यात्रा पर विशेष कर सुविधा के नाम पर लगाया जाता है।

२०. इसके अतिरिक्त सच्चर आयोग के नाम पर मुस्लिम सांसद चाहे वो किसी भी राजनीतिक पार्टी के हों, सरकार पर सदा दबाव बनाने का कार्य करते हैं।

हम यह भी भूल गए कि १९४७ में देश के ही

मुसलमानों ने पाकिस्तान और बांग्लादेश इसी मानसिकता के चलते लिए थे कि मुसलमान कभी हिन्दू बहुल देश में नहीं रह सकता। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे देश के मुसलमानों की सेवा घर के जमाई के समान देश के हिन्दू कर रहे हैं। फिर भी १० वर्ष तक उपराष्ट्रपति के पद पर बैठकर मलाई खाने के बाद भी देश के उपराष्ट्रपति (हामिद अंसारी) का बयान यही दर्शाता है कि वो उसी मानसिकता का पोषक है, जिसने इस देश का विभाजन करवाया था।

यह लेख पढ़कर मेरे मन में एक ही विचार आता है कि क्या इस देश में **बहुसंख्यक होना अपराध है?**

❑❑

अब आगे क्या?

रामरहीम डेरे के एक अनुमान से पंजाब और हरियाणा में २० लाख से अधिक समर्थक होंगे। इन समर्थकों में सबसे बड़ी संख्या मज़हबी कहलाने वाले सिखों और अनुसूचित हिन्दुओं की है। पंजाब भूभाग के मज़हवी सिख और अनुसूचित कहलाने वाले हिन्दू मुख्य रूप से ऐसे डेरों में चेले क्यों बनते हैं। यह जानना अत्यंत आवश्यक है। इन डेरों में जाने के मुख्य कारण-

१. **सिख और हिन्दू समाज में जातिवाद-** जातिवाद के चलते सिख गुरुद्वारों और हिन्दू मंदिरों में जाति विशेष का दबदबा रहता है। इस कारण से समाज का एक बड़ा वर्ग हिन्दू समाज की मुख्य धारा से कटकर इन डेरों का मानसिक गुलाम बनता है। जहाँ इन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि जातिवाद से दूर हैं। यह एक कैंसर के मरीज को पैरासिटामोल की गोली देने के समान है, जहाँ उसकी मूल समस्या का कोई समाधान नहीं होता, अपितु उसे दर्दनिवारक दवा देकर केवल शांत किया जाता है।

२. **दूसरा कारण आध्यात्मिक ज्ञान की कमी-** सिख गुरुओं ने मुगलों के अत्याचारों के साथ- साथ हिन्दू समाज में प्रचलित अंधविश्वासों के विरुद्ध भी जनजागरण का अभियान चलाया था। १९वीं शताब्दी में समाज के आध्यात्मिक जनजागरण की कमान आर्यसमाज ने संभाली। पिछले २-३ दशकों से आर्यसमाज के शिथिल हो जाने के कारण आध्यात्मिक रूप से अतृप्त जनता डेरों के चक्करों में पड़ गई। आर्यसमाज को फिर से वेदों के ज्ञान को जनता में प्रचारित करना चाहिए। जिससे जनता भ्रमित होने से बचे।

३. **तीसरा कारण पंजाब में नशे का प्रचलन-** वीरों की धरती पंजाब में विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में नशे की लत से एक पूरी युवा पीढ़ी बर्बाद हो गई है। जिन जिन घरों में कोई नशेड़ी होता है, वह घर का सामान तक बेच कर नशा करता है। सभी डेरे वाले नशे के विरुद्ध व्यापक अभियान चलाते हैं। जिसके प्रभाव से अनेक युवा नशा छोड़ने का संकल्प ले लेते हैं। उनके नशा छोड़ने से उनका परिवार उस डेरे का अनुयायी बन जाता है। पिछले २-३ दशकों में इस कारण से भी डेरों में जाने वाली संख्या में वृद्धि हुई है।

४. **सेल्फ मार्केटिंग-** राम-रहीम सरीखे डेरे वाले रक्तदान शिविर, बिना दहेज के विवाह करवाकर, फिल्में बनाकर, शिक्षण संस्थान खोलकर, हस्पताल आदि खोलकर अपने आपको सेवा करने वाली सामाजिक संस्था के रूप में प्रदर्शित करते हैं। बहुत लोग उनके साथ सेवाकार्य करने के लिए जुड़ जाते हैं।

राम रहीम का डेरा तो अब इतिहास बन जायेगा। पर अब आगे क्या होगा?

अगर हिन्दू समाज ऐसे ही निष्क्रिय रहा, तो राम रहीम का स्थान कुछ ही वर्षों में कोई अन्य डेरा ले लेगा। पाखंड की एक नहीं अनेक दुकानें ऐसे ही खुलती जाएंगी। अनुसूचित जातियों में पंजाब में पिछले कुछ वर्षों में चर्च की गतिविधियाँ बहुत बढ़ी हैं। ऐसे में इस भीड़ को लपकने का चर्च पूरा प्रयास करेगा। इस कार्य के लिए वह साम-दाम, दंड-भेद की किसी भी सीमा तक जा सकता है। वर्तमान में भी बहुत सारे हिन्दुओं के नाम के आगे मसीह लगा हुआ आप देख सकते हैं। चर्च के प्रचार का मुख्य कारण धन, नौकरी, शिक्षा या ईलाज की सुविधा, शादी का प्रलोभन, नशे आदि से छुड़ाना और जातिवाद है। चर्च और नये डेरों को रोकने के लिए समाज को रणनीति बनानी होगी। जातिवाद का निराकरण, नशा छुड़ाने के लिए सुविधा केंद्र, पतिवर्तित हुए ईसाईयों की शुद्धि या घर वापसी, शिक्षा का प्रचार, आध्यात्मिक गुरुओं द्वारा वैदिक संस्कृति का प्रचार, भातृत्व की भावना का प्रचार आदि आवश्यक है। इस कार्य में आर्यसमाज और संघ को बड़ी भूमिका निभानी पड़ेगी। आशा में हिन्दू समाज के प्रहरी इस लेख से प्रेरणा लेकर पुरुषार्थ करेंगे।

❑❑

स्वराज्य प्राप्ति व देश की आजादी के प्रथम उद्घोषक एवं प्रेरक ऋषि दयानन्द

(मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून, मो-09412985121)

हमारे देश को आठवीं शताब्दी व उसके बाद मुसलमानों ने गुलाम बनाया था और उसके बाद अंग्रेजों की ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इस पर राज्य किया। वास्तविकता यह है कि सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य-सृष्टि तिब्बत में हुई थी। सारे विश्व के पूर्वज यहाँ एक परिवार के रूप में रहा करते थे। परमात्मा ने यहीं पर ही अमैथुनी सृष्टि में चार आदिम ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को उत्पन्न कर सृष्टि की आदि में उन्हें चार वेदों का ज्ञान दिया था। आदि सृष्टि के लोग इन ऋषियों से वेदों का ज्ञान प्राप्त कर पूर्ण ज्ञानी हो गये थे। उन्होंने अन्य सभी मनुष्यों को उपदेश द्वारा वेदों का ज्ञान देने के साथ उनको उनके कर्तव्यों से भी अवगत कराया था। उस समय उनके आसपास नहरों व जल स्रोतों में स्वच्छ व निर्मल जल उपलब्ध हो जाता था। वायु पूर्ण शुद्ध थी। वृक्ष अनेक वा सभी प्रकार के फलों से लदे हुए थे। आसपास गायें मौजूद थीं, जिनका दुग्ध सभी मनुष्यों के लिए उपलब्ध था। इन सब पदार्थों से उनका निर्वाह आसानी से हो जाता था। समय के साथ तिब्बत में मनुष्यों की जनसंख्या बढ़ी। कुछ लोगों का आपस में विवाद भी हो जाता था। अतः ऐसे अनेक कारणों से लोगों ने समूहों में संसार के अनेक स्थानों पर जाकर वहाँ निवास करना आरम्भ कर दिया। समय-समय पर उनका एक दूसरे के पास आना-जाना व मिलना होता रहता होगा। वेदों व भारतीय इतिहास के शीर्ष विद्वान् महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार आर्यों ने समस्त विश्व में आर्यावर्त के (वर्तमान के भारतनामी) भौगोलिक स्थान को सर्वोत्तम जानकर यहाँ पर आकर निवास किया व इस निर्जन स्थान व भूखण्ड को प्रथम बार बसाया। तभी से यह स्थान आर्यावर्त कहलाया। आर्यावर्त्त से पहले इसका अन्य कोई नाम नहीं था और न कोई लोग या जाति यहाँ बसती व रहती थी। सृष्टि के आरम्भ के कुछ वर्ष बाद ही आर्य तिब्बत से सीधे आर्यावर्त व भारत आकर बस गये थे। सृष्टि की रचना व मनुष्योत्पत्ति को लगभग १.९६ अरब वर्ष हो चुके हैं। इस लम्बी अवधि में संसार में अनेक भौगोलिक, जातीय व समाजिक परिवर्तन हुए हैं। मुस्लिम व विदेशियों ने अपने राज्यों की नींव को मजबूत करने के लिए नाना प्रकार की कल्पनायें हम पर थोपी हैं, जिन्हें विदेशियों के उच्छिष्टभोजियों ने अपने आर्थिक व इतर स्वार्थों के कारण स्वीकार कर लिया। वास्तविकता वही है, जो महर्षि दयानन्द ने कही है। आर्य ही इस आर्यावर्त व भारत के मूल निवासी हैं। आर्यों ने किसी पर आक्रमण कर उन्हें पराजित किया और फिर यहाँ बसे , यह मान्यता कपोलकल्पित व अस्वीकार्य है।

यह भी ज्ञातव्य है कि सृष्टि के आरम्भ से आर्यों का न केवल आर्यावर्त-भारत पर ही, अपितु विश्व के सभी देशों पर चक्रवर्ती राज्य रहा है। भारत के सभी चक्रवर्ती सम्राट वेदों के सिद्धान्तों के अनुरूप धार्मिक होते थे और विश्व में सत्य व न्याय के सिद्धान्तों के अनुसार राज्य करते व कराते थे। ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि जब किसी देश के पास आवश्यकता से अधिक वैभव व ऐश्वर्य हो जाता है, तो वहाँ आलस्य व प्रमाद बढ़ता है, जिससे उन्नति अवनति की ओर मुड़ जाती है। ऐसा ही महाभारतकाल से कुछ काल पहले आरम्भ हुआ और इन्हीं कारणों से ५१०० वर्ष पूर्व महाभारत का युद्ध हुआ। इस युद्ध में जान व माल की कल्पनातीत

हानि हुई। देश की सभी व्यवस्थायें कुप्रभावित हुईं। राज्य के संचालन में बाधायें उपस्थित हुईं। विद्वानों की कमी से धर्म व शिक्षा व्यवस्थायें लड़खड़ा गईं। लोगों में मुख्यतः ब्राह्मणों ने वेदों के अध्ययन में श्रम करना लगभग छोड़ दिया। इस कारण देश व संसार में धर्म विषयक अन्धकार फैल गया। अज्ञान व अन्धविश्वासों में वृद्धि हुई और वेद विरुद्ध परम्पराओं का प्रचलन हुआ। यज्ञों में पशुओं की हिंसा, जन्मना जातिवाद, जन्मना ब्राह्मणवाद, छुआ-छूत, व्यक्ति व जड़पूजा, नास्तिकवाद, परतन्त्रता आदि के मूल में वेदों का अप्रचार ही मुख्य कारण रहा है।

ऐसे वातावरण में महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी का उदय व प्रादुर्भाव होता है और उनके नाम से नास्तिक मत, जो ईश्वर की सत्ता को नहीं मानते, चल पड़ते हैं। मूर्तिपूजा का आरम्भ भी जैन मत के द्वारा आरम्भ होता है। इनकी देखादेखी और अज्ञानता के कारण हिन्दुओं में मूर्तिपूजा का प्रवेश होता है। वेद प्रायः लुप्त व अप्रचलित हो जाते हैं। वेदों को जानने व यथार्थ रूप में समझने की योग्यता लोगों में समाप्त हो जाती है। अज्ञानता के कारण स्वार्थ सिद्धि के लिए मूर्तिपूजा और अवतारवाद व बाद में मृतक श्राद्ध व फलित ज्योतिष आदि का प्रचलन भी होता है। जन्मना जातिवाद, ऊँच-नीच, छुआछूत, वेदों के अध्ययन में अनधिकार आदि बातें भी प्रचलन में आती हैं। किसी में सामर्थ्य नहीं होता कि इनका विरोध करे। **'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'** व संसार को स्वप्नवत् मानने वाले स्वामी शंकराचार्य जी भीं मूर्तिपूजा व अन्य वेद विरुद्ध मान्यताओं का विरोध नहीं कर पाते। देश दिन- प्रतिदिन रसातल की ओर जा रहा होता है। छोटे- छोटे नगर व प्रान्त स्वतन्त्र राष्ट्र बनने लगते हैं। विदेशी आते हैं और भारत को गुलाम बनाकर यहाँ की माताओं, बहिन, बेटियों को अपमानित करते हैं। अरब देशों में ले जाकर उनको कौड़ियों के दाम पर नीलाम किया जाता है। उनसे मल-मूत्र तक साफ कराया जाता है और मार भी दिया जाता है। लोगों का जबरदस्ती बलप्रयोग से धर्मान्तरण किया जाता है, उन्हें गोमांस खाने को मजबूर किया जाता है और धर्मान्तरित न होने वालों के सर काट दिये जाते हैं। फिर अंग्रेजों की गुलामी आती है। वह भी जी भर कर देश का शोषण और यहाँ के हिन्दुओं पर भीषण अत्याचार करते हैं। देश का भविष्य धूमिल हो जाता है। आशा की कोई किरण दिखाई नहीं देती, जो इस विपरीत परिस्थति से देश को बाहर निकाले।

ऐसे समय में गुजरात के टंकारा नगर में बालक मूलशंकर का जन्म होता है। बाद में यही बालक महर्षि दयानन्द के नाम से प्रसिद्ध होते हैं। यह योग ओर सभी धर्मग्रन्थों का अध्ययन करते हैं। वेदविद्या प्राप्त कर उस पर अधिकार प्राप्त करते हैं और पाते हैं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान एवं सभी सत्य विद्याओं की पुस्तक है। स्वामी विरजानन्द सरस्वती, मथुरा महर्षि दयानन्द के विद्यागुरु थे। वह उन्हें देश भर से अज्ञान व अविद्या को दूर करने का आदेश व परामर्श देते हैं। महर्षि दयानन्द उनकी आज्ञा को स्वीकार कर इस कार्य में लग जाते हैं और ५००० वर्षों से जिस अज्ञान व अविद्या ने देश की जड़ों को खोखला बना दिया था, उस अज्ञान व अंधविश्वासों को वेद विद्या के प्रचार से नष्ट कर देश को पुनः संसार में आध्यात्मिक व सामाजिक दृष्टि से सर्वोत्तम बनाने का आन्दोलन करते हैं और उसमें सफल भी होते हैं।

ऋषि दयानन्द का जन्म १२ फरवरी, सन् १८२५ को गुजरात प्रदेश के टंकारा नामक स्थान पर हुआ था। २२वें वर्ष में उन्होंने गृहत्याग किया। सन् १८६० तक वह देश भर में घूम-घूम कर योग व अन्य विद्याओं को योग्य विद्वानों व योगियों आदि से सीखते रहे। पूर्ण विद्या उन्हें स्वामी विरजानन्द सरस्वती से सन् १८६३ में प्राप्त हुई। वहाँ से चलकर उन्होंने अज्ञान व अन्धविश्वास

दूर करने व देश की परतन्त्रता को दूर करने के लिए ज्ञान के प्रचार व प्रसार के प्रतीक वेद प्रचार का कार्य आरम्भ किया। वह देश में घूम-घूम कर उपदेश करने के साथ वेद-विरुद्ध मतों के विद्वानों से चर्चायें, वार्तालाप व शास्त्रार्थ करते थे। अविद्या व अन्धविश्वासों का खण्डन भी करते थे जो कि अत्यावश्यक था और आज भी है। ज्ञान के प्रचार व प्रसार के लिए ही उन्होंने सत्यार्थप्रकाश सहित यजुर्वेद,आंशिक-ऋग्वेदभाष्य, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया। स्वामी जी के सभी ग्रन्थों में ज्ञान की प्राप्ति, गुलाम बनने व बनाने का विरोध, देश को स्वतन्त्र करने की प्रेरणा अनेक स्थानों पर विद्यमान है। सन् १८८३ में संशोधित सत्यार्थप्रकाश में वह स्वराज्य व आजादी की प्रेरणा करते हुए लिखते हैं, **कोई (अंग्रेज हुकमरान) कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय (अपने देश में उत्पन्न वेदों के विद्वान् लोगों द्वारा संचालित राजसत्ता) राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों (अंग्रेजों) का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"** यह, ऐसे व इससे मिलते जुलते अनेक वचन सत्यार्थप्रकाश और उनके अन्य ग्रन्थों में भी पाये जाते हैं, जो देश की आजादी के प्रेरक बने। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में उक्त शब्दों में खुले रूप में अंग्रेजों के राज्य की भारतीयों द्वारा संचालित राज्य की तुलना में त्याज्य बताया है। देश के इतिहास में ऐसे शब्द इससे पूर्व किसी महापुरुष या व्यक्ति द्वारा नहीं कहे गये। ऐसा साहस अन्य कोई व्यक्ति कर भी नहीं सकता था। सन् १९४२ में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा हमारे राजनेताओं ने दिया, उसमें भी ऋषि दयानन्द जी के इन्हीं वाक्यों की प्रेरणा व प्रतिध्वनि कार्य करती हुई दृष्टिगोचर होती है। यही कारण था कि आजादी के आन्दोलन में सबसे अधिक भागीदारी आर्यसमाज के स्त्री व पुरुषों द्वारा की गई। स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, वीर सावरकर सहित सभी क्रान्तिकारियों के गुरु पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा, गोपाल कृष्ण गोखले के गुरु महादेव गोविन्द रानाडे, भाई परमानन्द, रामप्रसाद बिस्मिल, शहीद भगतसिंह और उनके पिता व पितामह सभी ऋषि दयानन्द के अनुयायी थे।

ऋषि दयानन्द ने न केवल आजादी की ही अपितु समग्र क्रान्ति की प्रेरणा भी की। वेद क्रान्ति सहित उन्होंने समाज सुधार, के सभी कार्यों को हाथ में लिया और देश के सामने उनका महत्व उजागर किया। न केवल आजादी व समाज सुधार अपितु शिक्षा के प्रसार हेतु भी गुरुकुलों की स्थापना कर आर्यसमाज ने शिक्षा जगत में भी क्रान्ति की। अनाथालय खोले गये। विधवा विवाहों को प्रोत्साहित किया गया। दलितों को गुरुकुलों में प्रविष्ट कर उन्हें वेदों का आचार्य और पुरोहित बनाया गया। प्रो० मैक्समूलर तक दबी जुबान से ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य व समाज सुधार आदि कार्यों की प्रशंसा करते हुए दिखाई देते हैं। महर्षि दयानन्द ने इन सभी कार्यों को करते हुए गोरक्षा और हिन्दी के प्रचार व प्रसार का महनीय कार्य भी किया और इन क्षेत्रों में देश के भावी कर्णधारों का मार्गदर्शन किया।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं। कि आजादी सहित राजनीतिक व सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत स्वामी दयानन्द सरस्वती ही थे। देश की सत्तरवीं आजादी के दिवस पर हम स्वतन्त्रता के अग्रदूत स्वामी दयानन्द का पावन स्मरण कर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करते हैं। देश की आजादी में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस आदि क्रान्तिकारियों व गांधी जी व सरदार पटेल आदि नरमपंथियों सहित सभी देशभक्तों को नमन करते हैं। ओ३म् शम्।

❑❑

श्री कृष्ण का पवित्र और महान जीवन चरित

(कष्ण चन्द्र गर्ग, पंचकूला, दूरभाष - 0172-4010679)

श्री कृष्ण महाभारत के सबसे अधिक महत्वपूर्ण पात्र थे। महाभारत का युद्ध द्वापर युग के अन्त में अब से लगभग ५२०० वर्ष पूर्व हुआ। श्री कृष्ण के जीवन चरित का प्रामाणिक स्रोत महाभारत का पुस्तक ही है। महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण का जीवन बड़ा पवित्र और महान था। उन्होंने जन्म से मृत्यु तक कोई भी बुरा काम किया हो- ऐसा नहीं लिखा।

महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण की एक पत्नी थी- रुक्मिणी। विवाह के बाद श्री कृष्ण ने अपनी पत्नी रुक्मिणी के साथ १२ वर्ष तक हिमालय पर्वत पर रहकर ब्रह्मचर्य का पालन किया। उसके पश्चात् उनके यहाँ एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम प्रद्युम्न रखा गया। प्रद्युम्न बड़ा होकर हूबहू अपने पिता श्री कृष्ण जैसा ही दीखता था।

महाभारत में राधा नाम की किसी स्त्री का कोई जिकर नहीं है।

राजसूय यज्ञ (महाभारत के युद्ध के पहले की अवस्था है)- पाण्डवों के राज्य का तेज सभी जगह पहुँच चुका था। प्रजा सुखी थी। सभी राजे-महाराजे उनका सिक्का मानते थे। तब युधिष्ठिर ने महाराजाधिराज (चक्रवर्ती सम्राट) की उपाधि पाने के लिए राजसूय यज्ञ की ठानी। इसके सम्वन्ध में उसने अपने मन्त्रियों और भाइयों को बुलाकर पूछा- क्या मैं राजसूय यज्ञ कर सकता हूँ? सबने जवाब दिया- हां, अवश्य कर सकते हैं, आप इसके योग्य पात्र हैं। व्यास आदि ऋषियों से यही प्रश्न किया। उन सबने भी हां में ही उत्तर दिया। परन्तु युधिष्ठिर को श्री कृष्ण की सम्मति लिए बिना तसल्ली न हुई। उन्होंने श्री कृष्ण से कहा- हे कृष्ण! कोई तो मित्रता के कारण मेरे दोष नहीं बताता, कोई स्वार्थवश मीठी-मीठी बातें करता है। पृथ्वी पर ऐसे लोग ही अधिक हैं। उनकी सम्मति से कोई काम नहीं किया जा सकता। आप इन दोषों से रहित हैं। इसलिए आप ही मुझे ठीक-ठीक सलाह दें। तब श्री कृष्ण बोले- महान पराक्रमी जरासन्ध के जीते जी आपका राजसूय यज्ञ पूरा न होगा। उसको हराने के बाद ही यह महान कार्य सफल हो सकेगा।

जरासन्ध वध- जरासन्ध बड़े विशाल और वैभवशाली राज्य मगध का राजा था। वह बड़ा क्रूर और अत्याचारी था। उसने अपने यहाँ ८६ राजाओं को बन्दी बना रखा था और यह ऐलान कर रखा था कि जब इनकी संख्या १०० हो जाएगी, वह इन सबकी बलि चढ़ा देगा। यह अत्याचार श्री कृष्ण को सहन नहीं था। इसी कारण से वे उसे समाप्त करना चाहते थे। जरासन्ध का जन, धन, बल इतना अधिक था कि रणक्षेत्र में उसे हराना असम्भव जैसा था। श्री कृष्ण ने नीति से जरासंन्ध का भीम से युद्ध करवा दिया, जिसमें जरासन्ध मारा गया। तब श्री कृष्ण ने सभी बन्दी राजाओं को मुक्त कर दिया और जरासन्ध के पुत्र सहदेव को मगध का राजा बना दिया।

प्रथम अर्घ्य (पहला सम्मान)- राजसूय यज्ञ आरम्भ होने पर भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर से कहा कि उपस्थित राजाओं में जो सबसे श्रेष्ठ है, उसे ही प्रथम अर्घ्य देना चाहिए। युधिष्ठिर ने भीष्म से ही पूछ लिया कि ऐसा व्यक्ति कौन है, जो पहले अर्घ्य पाने का पात्र है। इस पर भीष्म ने कहा- जैसे चमकने वाले सभी तारों में सूर्य सबसे अधिक प्रकाशमान है, वैसे ही इन सब राजाओं में श्री कृष्ण तेज, बल, पराक्रम में सबसे अधिक हैं। इसलिए वे ही प्रथम अर्घ्य पाने के योग्य हैं। तब युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर सहदेव ने श्री कृष्ण को प्रथम अर्घ्य दिया।

सन्धि का प्रस्ताव- पाण्डवों ने १२ वर्ष वन में बिताने के बाद १३वाँ वर्ष अज्ञातवास में बिताया। फिर कौरवों से अपना राज्य माँगा। जब कौरवों ने राज्य देने से इनकार कर दिया, तब पाण्डवों ने युद्ध का निश्चय कर लिया। अन्तिम कोशिश के तौर पर श्री कृष्ण कौरवों के पास जाने को तैयार हुए। सबने उनको रोका

कि कौरव मानने वाले नहीं हैं। तब श्री कृष्ण ने कहा कि संसार में कार्यसिद्धि के दो आधार होते हैं - एक मनुष्य का पुरुषार्थ, दूसरा ईश्वर की इच्छा। मैं पुरुषार्थ तो कर सकता हूँ, ईश्वरेच्छा मेरे अधीन नहीं है। इसलिए फल मैं नहीं जानता। मैं इतना जानता हूँ कि मुझे शक्ति भर प्रयास कर लेना चाहिए।

हस्तनापुर पहुँचने पर महात्मा विदुर ने श्री कृष्ण से कहा कि दुर्योधन मानने वाला नहीं है। अतः आप सन्धि का प्रयत्न छोड़ दें। तब श्री कृष्ण ने कहा- सारी पृथ्वी खून से लथपथ होती देख रहा नहीं जाता। और यह भी कहा- आपत्ति में पड़े अपने व्यक्ति को बालों से पकड़कर भी खींचने का यत्न करे, फिर मनुष्य निन्दा का पात्र नहीं होता।

श्री कृष्ण ने सन्धि के लिए दुर्योधन, धृतराष्ट्र, कर्ण से बात की, उन्हें समझाने का प्रयास किया। परन्तु सफलता न मिली। इस दौरान दुर्योधन ने उन्हें अपने यहाँ भोजन के लिए कहा। तब श्री कृष्ण बोले- राजन्! किसी के घर का अन्न दो कारणों से खाया जाता है- या तो प्रेम के कारण या आपत्ति पड़ने पर। प्रीति तो तुम में नहीं है और संकट में हम नहीं हैं।

यजुर्वेद का मन्त्र है-

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।।

इस वेदमन्त्र में बताया गया है कि सुखी और उन्नत जीवन के लिए दो गुणों की आवश्यकता है- एक विद्वता और दूसरा बल। श्री कृष्ण में ये दोनों गुण विद्यमान थे। उनकी बुद्धिमता और नीति के कारण ही कम शक्ति के होते हुए भी महाभारत के युद्ध में पाण्डवों ने कौरवों पर विजय प्राप्त की और शक्तिशाली, अत्याचारी राजा जरासन्ध को मार गिराया। श्री कृष्ण ने शारीरिक बल के सहारे ही अत्याचारी राजा कंस को यमलोक पहुँचा दिया और घमण्डी शिशुपाल का वध कर दिया।

गीता में श्री कृष्ण ने योग की परिभाषा ऐसे की है- **योगः कर्मसु कौशलम्।** अर्थात् कार्य को कुशलता-पूर्वक करना योग है। इस दृष्टि से श्री कृष्ण पूर्ण योगी थे क्योंकि उन्होंने जो भी काम किए, उनमें अपनी बुद्धि बल और नीति से सफलता प्राप्त की।

महाभारत के युद्ध में जब अर्जुन और कर्ण के बीच लड़ाई हो रही थी, तब कर्ण के रथ का पहिया पृथ्वी में धंस गया और वह उसे निकालने के लिए रथ से नीचे उतरा। तब कर्ण ने अर्जुन को लड़ाई के धर्म की दुहाई दी और वह चिल्लाया कि निहत्थे पर वार करना धर्म नहीं है। इस पर श्री कृष्ण बोले- अरे कर्ण! अब धर्म-धर्म चिल्लाता है। परन्तु—

१. जिस समय तुम, दुशासन, शकुनि और सौबल सब मिलकर ऋतुमती द्रौपदी को घसीट लाए थे, उस समय तुम्हें धर्म की याद न आई।

२. जब तुम बहुत से महारथियों ने मिलकर अकेले अभिमन्यु को घेरकर मार डाला था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

३. जब १३ वर्ष के बनवास के बाद पाण्डवों ने अपना राज्य माँगा और तुमने नहीं दिया, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

४. जब तुम्हारी सम्मति से दुर्योधन ने भीम को विष खिलाकर नदी में डाल दिया था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

५. जब वारणावत नगर में लाख के घर में तुमने सोते हुए पाण्डवों को जलाने का प्रयत्न किया था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

कर्ण को इतना कहकर श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि इस प्रकार दलदल में फंसे कर्ण का वध करना पुण्य है, पाप नहीं। दूसरे ही क्षण कर्ण अर्जुन के बाण से जख्मी होकर गिर गया। यह थी श्री कृष्ण की नीतिमत्ता।

श्री कृष्ण को पाण्डवों द्वारा कौरवों के साथ जुआ खेलना, जुए में सब कुछ हार जाना और वन में चले जाना- इन सब बातों का पता तब चला, जब पाण्डव वन में रह रहे थे। श्री कृष्ण वन में पाण्डवों से मिलने गए। वहाँ जाकर उन्होंने कहा कि यदि मैं द्वारिका में होता, तो हस्तनापुर अवश्य आता और जुए के बहुत से दोष बताकर जुआ न होने देता। ऐसा था श्री कृष्ण का नैतिक बल और आत्मविश्वास। दूसरी और भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र आदि बड़े लोग जुआ और जूए से जुड़े अन्य दुष्कर्म अपनी आँखों के सामने देखते रहे, पर उनमें से किसी में भी उसे रोकने का साहस न हुआ।

❑❑

क्या कुरान मांस-विधायक है?

(प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु, वेद सदन अबोहर)

मांसाहारियों ने कुरान को जितना मांसाहार विधायक बनाया है, वह वस्तुतः इतना मांसाहार विधायक है नहीं। कहीं कुछेक पशुओं को हलाल कह दिया, मांस-प्रिय मौलवी साहब ने समझ लिया कि लो बिस्मिल्लाह पढ़ने की आज्ञा हो गई। मियां हलाल और उपयोगों के लिये भी हो सकता है, जैसे स्त्री विवाह के लिए हलाल है। और जो कहीं खाने अर्थ के धातु का स्पष्ट प्रयोग हो गया फिर तो कहना ही क्या है! कुरान में जहाँ जहाँ खाने की बात आई है, वहाँ लिखा है इन पशुओं में से खाओ। में से खाने का अर्थ मांस खाना ही क्यों लिया जाए। जैसा हम ऊपर कह आये हैं। इस्लाम के हराम हलाल में एक विशेषता यह भी है कि जिस पशु का मांस हराम है, उसके बाल खाल, दूध आदि भी हराम हैं। अच्छा हो यदि मांस की जगह दूध आदि खाद्य पदार्थ हलाल समझ लिये जाएं। खाने का अर्थ है भोग करना, सो किसी भी अंश का हो सकता है।

अब एक और स्थल शेष रह गया है। उस की व्याख्या भी अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार कर दें। लिखा है-

तुम से पूछते हैं, हलाल कौन सी चीजें हैं? कह, सुथरी चीजें और सयाने प्राणी जो तुमने कुत्ते की तरह सिधा रखे हों और जिन्हें तुम सिखाते हो उस से जो प्रभु ने तुम्हें सिखाया, वह जो तुम्हारे लिये पकड़ रखें, उसको खाओ और प्रभु का नाम उस पर ले लो।-

सू० मायदा आ० ४

जिस शब्द का अर्थ हमने सयाने प्राणी किया है, उसका अर्थ भाष्यकार "शिकारी जानवर" करते हैं। आगे जहाँ लिखा है- वह जो तुम्हारे लिये पकड़ रखें- वहाँ "पशु" का प्रत्याहार स्वयं कर देते हैं। यह अनुवादकों की जबरदस्ती है। जवारिह का रूढ़ि-अर्थ है आक्रमण करने वाले या परीक्षा करने वाले अर्थात् सयाने। यह कहाँ आवश्यक है कि यह प्राणी पशु ही को पकड़ें। वे कोई भी पदार्थ ला सकते हैं और यदि वे शिकारी पशु ही हों, और उन्होंने पकड़ा भी पशु ही हो, तो भी उसके हलाल होने से उसका मांस ही हलाल हो गया, यह कहाँ का तर्क है? हलाल तो उनकी खाल तथा हड्डी आदि कोई भी उपादेय अंश हो सकता है।

कुरान का मत

हम ऊपर कह चुके हैं कि कुरान में सिवाय मृत प्राणी के खाने के निषेध के और कहीं मांसाहार का निषेध हमें नहीं मिला। परन्तु जितना हलाल साधारणतया मांस को कहा जाता है, वह भी अनुवादकों की मन-गढ़न्त है। जगह-जगह पर "पशु" शब्द का प्रत्याहार कर कुरान को खाह-म-खाह हिंसा का प्रचार करने वाली पुस्तक बना दिया गया है। कुरानकार के सामने अरब के मूर्खों की अन्ध-विश्वास-परक कुरीतियाँ तो हैं, जिन्हें वह धर्म विरुद्ध समझ कर उनका खण्डन करते हैं। परन्तु जैसा बुहेरा, सायबा, वसीला आदि के सम्बन्ध में उतरी आयत में लिख दिया कि कुरान की इस में कुछ आज्ञा नहीं तात्पर्य यह है कि वह अन्ध-विश्वास तो अशुद्ध है। रहा ऐसे पदार्थों का उपयोग लेना उस का निश्चय अपना लाभालाभ देख कर स्वयं करो। चीज स्वच्छ खाओ स्वास्थ्यवर्द्धक खाओ और लाभकर खाओ। **इस अवस्था में मुसलमान मांस खाने का पक्ष कदापि नहीं ले सकते। हिंसा कहाँ से आई?- हिंसक पशु में हिंसा कहाँ से आई- कादिर मीर्जा का यह कथन भी ध्यान देने योग्य है कि स्वयं मुसलमानों ने अपने लिये हिंस्रपशु त्याज्य समझ लिये हैं। इसका कारण? यही कि उनका मांस हिंसा-भाव लाता है। मिर्ज़ा पूछते हैं कि उनमें यह हिंस्रता कहाँ से आई? स्पष्ट है कि मांस खाने से तो मांस खाना ही क्यों**

न छोड़ दिया जाए? उन मिर्जा की एक और युक्ति भी मार्मिक है कि मांसाहार के रिवाज ने कसाई श्रेणी पैदा की है, जो किसी प्रकार मानव-जाति के गर्व का कारण नहीं। वे तो मनुष्यों में ही मानों हिंस्र पशु पैदा हो गये हैं

पैगम्बर का व्यवहार

स्वयं मुहम्मद साहब के व्यवहार के संबन्ध में मिर्जा महाशय लिखते हैं-

आपत्काल को छोड़ कर पवित्र पैगम्बर मुहम्मद प्रायः रोटी, दूध, खजूर और शहद पर गुजारा करते रहे।

उनके विषय में एक कथा भी लिखी है कि एक दिन जब वह प्रभु के ध्यान में निमग्न थे, "एक बिल्ली उनके चोले के किनारे पर आ बैठी और वहीं सो गई। जब नवी ध्यान से फारिग हुए, उन्होंने बिल्ली को देखा और यद्यपि उन्हें आवश्यक कार्य था,फिर भी वह बिल्ली के जागने तक बैठे रहे और उस की नींद खराब न की।" यह घटना लिख कर मीर्ज़ा पूछते हैं- "क्या हृदय में ऐसा प्रेम भाव रखते हुए वे अपने अनुयायियों को केवल अपनी क्षुधा की निवृत्ति के लिये वृथा जीवन विनष्ट करने की आज्ञा दे सकते थे? जब अन्न, दूध, खजूर और शहद सब के खाने के लिये पर्याप्त मात्रा में विद्यमान था?"

कुरान-कथित अन्न

कुरान में खाने के पदार्थों का विवरण दिया है- उसने पैदा किये बाग छत्रियों वाले और विना छत्रियों के और खेती। कई प्रकार का है उसका फल। ज़ैतून और अनार सदृश और असदृश। खाओ उसके फल में से जब फल लाए। सू० अनआम रु० ७

इसके झट आगे लिखा है-

और पशु लदने वाले और यात्रा वाले।

खाने के लिये कुरान की दृष्टि अन्न आदि पर है। वेद में आया है-

"पयः पशूनां रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नि यच्छात्।" द्रष्टव्य अथर्ववेद १६.३१.५

अर्थात् प्रेरक परमात्मा मुझे पशुओं का दूध और औषधियों का रस दे।

अहिंसा तो वेद का आदर्श ही है लिखा है-

"अनागो हत्या वै भीमा कृत्ये मा नो गामश्वं पुरुषं वधीः।

यत्र यत्रासि निहिता ततस्तवत्वोत्थापंयामसि पर्णाल्लघीयसी भव।" देखिये अथर्ववेद १०.१.२६

निरपराध का मारना भयंकर पाप है। हे हिंसे हमारे गौ घोड़े, मनुष्य को मत मार। जहाँ जहाँ तू छिपी है, वहाँ वहाँ से हम तुझे उठा फेंकते हैं, तू तिनके से भी हलकी होगी।

वेद में गौ घोड़े और मनुष्य निरपराध प्राणियों के प्रतिनिधि रूप ही में परिगणित होते हैं अभिप्राय यह है कि पशुओं की ख्वाह-म-ख्वाह हिंसा न कही जाय।

उपसंहार

मनसूख़ आयतें अब भी हैं- इस निबन्ध में सब से पूर्व हमने महामना मुहम्मद के जीवन के उस काल की आयतों का उल्लेख किया है, जब वह शान्ति और विचार की स्वतन्त्रता का प्रचार करते थे। भाष्यकारों के मत में इस समय यह आयतें मनसूख़ हैं। परन्तु उन का कुरान में सुरक्षित रहना बताता है कि कुरानकार उन की आध्यात्मिक मिठास को समझते थे। उन में छिपी धार्मिक भावना का अनुभव करते और विपरीत परिस्थिति में भी इन आयतों का लोप न होने देना चाहते थे। ऋषि दयानन्द के प्रभाव से सहिष्णुता की इस मधुर अरबी लय के फिर से जगाये जाने का समय आया है। भविष्य के इस्लाम में इन आयतों का स्थान महत्व और आदर का होगा।

संयम ही सर्वश्रेष्ठ कुर्बानी- इसके प्रश्चात् मैंने कुर्बानी के विषय पर विचार किया है। मूसा की समकालीन किसी जाति द्वारा पूजे गए बछड़े का वर्णन तो कुरान में है परन्तु उस के वध का कहीं संकेत नहीं। सू० बक्र में एक गाय के मारे जाने का वृत्तान्त है परन्तु मार कर फिर उसे जिला दिया गया है। इब्रहीम की कुर्बानी अपने बालक का उत्सर्ग है। बालक का स्थान वहाँ किसी स्वर्गीय प्राणी ने लिया है। कुर्बानी वास्तव में हज के समय का एक कृत्य है परन्तु हज के प्रकरण में तो स्पष्ट लिखा है कि मांस और रुधिर

ईश्वर को नहीं पहुँचते, तो क्या पहुँचता है? लिखा है- **"संयम"**। वही वास्तविक बलिदान है। मूसा ने जिस आग के पास जाते हुए जूता उतार दिया, वह अग्निहोत्र की आग है। यज्ञ के अर्पण होने वालों तथा यज्ञकुण्ड के पास बैठने वालों जैसा **"भाग्यशाली"** और कौन हो सकता है।

अन्त में हम ने सामिष तथा निरामिष भोजन के प्रश्न को ले कर सिद्ध किया है कि कुरान-विहित भोजन तो शाक-भाजी ही है। पशु हलाल है परन्तु हलाल का अर्थ है अपने उचित उपयोग के लिये विहित। मौलानाओं का प्रत्याहार हटा दिया जाए तो मांस-भक्षण का स्पष्ट विधान कुरान में नहीं मिलता। हां! कहीं कहीं कुछ पदार्थों के उपभोग के वृथा त्याग का खण्डन किया है। वहाँ कुरान की दृष्टि में विधर्मियों का देव-पूजा-परक अंधविश्वास है। उसे कुरान हटाना चाहता है। परन्तु उस विश्वास के हटने के साथ ही, अन्यथा हेय वस्तु उपादेय हो जाए, यह कुरान को कदापि अभिमत नहीं हो सकता। हां! मांस का स्पष्ट निषेध उसी अवस्था में समझा जा सकता है यदि कुरान में आए शब्द "अल्मैतत्" मर गया- के अर्थों में 'मारा गया' पशु भी समाविष्ट समझा जाए।

❑❑

महर्षि दयानंद द्वारा 1878 में तैयार करवाया गया कुरान का प्रथम देवनागरी (हिंदी) अनुवाद

(भावेश मेरजा,भरुच, मो०:-09879528247)

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानंद सरस्वती जी (१८२५-१८८३) ने इस्लाम के मुख्य ग्रंथ कुरान का सर्वप्रथम देवनागरी अनुवाद तैयार करवाया था।

ऐसा लगता है वे इसे प्रकाशित भी करना चाहते थे- संभवतः इसलिए कि लोग कुरान की असलियत से, उसकी शिक्षाओं से सुपरिचित हो सके।

महर्षि जी ने यह अनुवाद संभवतः पटना निवासी मुंशी मनोहरलाल जी से करवाया था। महर्षि जी तो अरबी या फारसी नहीं जानते थे परंतु मुंशी जी अरबी फारसी के ज्ञाता थे।

यह अनुवाद अजमेर स्थित परोपकारिणी सभा में सुरक्षित हैं और आज पर्यंत अप्रकाशित है।

२४ अप्रैल १८७६ को दानापुर के बाबू माधोलाल को देहरादून से लिखे अपने एक पत्र में महर्षि जी ने लिखा है-

"The Koran in Nagri is entirely ready but has not been printed yet."

अर्थात्

"कुरान नागरी में पूरा तैयार है, परंतु अभी तक छापा नहीं गया।"

(स्रोत : महर्षि दयानंद सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, भाग-१, पृष्ठ २५६-२६०, संस्करण नवंबर १६८०)

ध्यातव्य है कि महर्षि दयानंद जी कुरान के समालोचक थे। सत्यार्थ प्रकाश के १८७५ में प्रकाशित प्रथम संस्करण के लिए महर्षि जी ने कुरान की समीक्षा लिखकर तैयार तो कर ही ली थी, परंतु उसके प्रकाशक एवं छपाने का व्यय करने वाले मुरादाबाद निवासी राजा जयकृष्ण दास (काशी के तत्कालीन डिप्टी कलेक्टर) ने इस प्रकरण का समावेश प्रथम संस्करण में नहीं किया। अतः यह प्रकरण उसमें नहीं छपा। परंतु सत्यार्थ प्रकाश के १८८४ में प्रकाशित दूसरे संशोधित संस्करण में महर्षि जी ने ग्रंथ के १४वें समुल्लास के रूप में कुरान की स्व-लिखित समीक्षा प्रकाशित की है।

आतंकवाद से त्रस्त मानवता को बचाने के लिए विश्व के राजनतिक नेताओं, धार्मिक तथा सामाजिक अग्रणियों, चिंतकों एवं जागरूक नागरिकों को सत्यार्थ प्रकाश का यह १४वां समुल्लास (प्रकरण) खुले दिमाग से वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पक्षपातरहित भाव से अवश्य पढ़ना चाहिए। महर्षि जी की इस समीक्षा में मानवता के त्राण का निश्चित कारण निहित है।

❑❑

महर्षि दयानन्दाभिमत मुक्ति मीमांसा

(डॉ० रमेश दत्त मिश्र,फैजाबाद)

जुलाई २०१७ अंक का शेष

इन चार सहायक साधनों के बाद मुक्ति की प्राप्ति में **'श्रवण चतुष्टय'** भी प्रमुख साधन है।

पहला, श्रवण - जब कोई विद्वान् उपदेश करे, तो शान्ति से ध्यान देकर सुनना चाहिए। विशेष ब्रह्मविद्या के सुनने में अत्यन्त ध्यान देना चाहिए, क्योंकि यह सब विद्याओं से सूक्ष्म विद्या है।

दूसरा, मनन-सुने हुए विचारों का एकान्त में मनन करना चाहिए, यदि शंका हो तो उसका समाधान करना चाहिए।

तीसरा, निदिध्यासन - जब सुनने और मनन करने से सन्देह दूर हो जाय, तब समाधिस्थ होकर, जैसा सुना और विचारा था, वह वैसा ही है या नहीं, उसको ध्यान योग से देखना चाहिए और

चौथा साक्षात्कार - जैसे पदार्थ का स्वरूप, गुण और स्वभाव हो, वैसा जान लेना ही साक्षात्कार है। मानव प्रकृति में तीन गुण हैं- सत्, रजस् और तमस्। जो मुक्ति की इच्छा करते हों, उनको तमसजन्य अर्थात् क्रोध, मलिनता, आलस्य तथा प्रमाद आदि और **रजसजन्य** अर्थात् ईर्ष्या, द्वेष, काम, अभिमान तथा विक्षेप आदि अवगुणों का परित्याग करना चाहिए। इनसे भिन्न शान्त प्रकृति, पवित्रता, विद्या, विचार आदि गुणों को धारण करना चाहिए। मुक्ति के इच्छुक व्यक्ति को इन चार प्रकार के गुणों को धारण करना चाहिए- **पहला मैत्री** अर्थात् अच्छे लोगों से मित्रता करने का नाम मैत्री है। दूसरा, करुणा- दुःखी जनों पर दया करना करुणा है। तीसरा, मुदिता- पुण्यात्माओं को देखकर हर्षित होने का नाम मुदिता है तथा **चौथा, उपेक्षा-** दुष्ट लोगों में न प्रीति और न बैर करने का नाम उपेक्षा है। इसके साथ नित्य प्रति कम से कम दो घण्टा प्रभु ध्यान में मग्न रहना चाहिए।

उपर्युक्त साधनों को अपनाकर कोई भी व्यक्ति मुक्ति के परमानन्द को प्राप्त कर सकता है।

हमारे पौराणिक भाई गंगा में डुबकी लगाने, राम का नाम जपने, अपने गुरुओं का ध्यान करने, उनका चरणामृत पीने व जूठा खाने, पुराणों की कथा सुनने, किसी ग्रन्थ विशेष की पूजा करने, व्रत, उपवास रखने, निर्दोष जीवों की बलि देने, तीर्थयात्रा करने, मरते वक्त मुख में गंगाजल डालने व गाय की दुम पकड़कर गौदान आदि करने को मुक्ति का साधन मानते हैं। इसी तरह हमारे ईसाई और मुसलमान भाई भी ईसा और मुहम्मद साहब पर ईमान लाने को ही मुक्ति का साधन मानते हैं। यह सब इन लोगों का अंधविश्वास है। इसलिये इन लोगों की बातों को मुक्ति का साधन नहीं माना जा सकता। मुक्ति का साधन जो महर्षि दयानन्द जी ने बतलाया है, उसे ही माना जा सकता है। उससे बेहतर मुक्ति का कोई दूसरा साधन नहीं है।

महर्षि दयानन्द जी ने मुक्ति प्राप्ति के जिन साधनों का उल्लेख किया है, उन साधनों के अनुष्ठान से जीवों को मुक्ति एक जन्म में नही प्राप्त हो सकती। यह अनेक जन्मों के सतत् प्रयास के बाद ही मिल सकती है, क्योंकि अविद्या का नाश और अनेक जन्मों के दूषित कर्मों के संस्कार जो जीवों में विद्यमान रहते हैं उनसे छुटकारा पाना एक जन्म में संभव नहीं है। इसके लिए अनेक जन्मों में मुक्ति के साधनों का सतत् अनुष्ठान करना पड़ता है। इनका सतत् अनुष्ठान करते-करते जब अविद्या का नाश हो जाता है और कर्मबन्धन या संस्कारों से छुटकारा मिल जाता है तब जीव को मुक्ति मिल जाती है। मुक्ति परमानन्द की अवस्था है। उस अवस्था

में जीव अपने शुद्ध स्वरूप में रहता है तथा भीतर-बाहर सब जगह व्याप्त आनन्दस्वरूप परमात्मा में निवास करता है। महर्षि दयानन्द जी ने इस बात का समर्थन उपनिषद् के निम्न श्लोक के आधार पर किया है-

भिद्यते हृदय ग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे पराऽवरे।।
मुण्डकोप. २/२/१८

जब इस जीव के हृदय की अविद्या अज्ञानरूपी गाँठ कट जाती, सब संशय छिन्न होते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं, तभी उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप्त रहता है, उसमें निवास करता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मुक्ति मिल जाने के बाद जीव ब्रह्म में निवास करता है। इसके विपरीत आचार्य शंकर का मत है कि मुक्ति की अवस्था में जीव ब्रह्म में लय हो जाता है। महर्षि दयानन्द जी को यह विचार मान्य नहीं है। इसके विरुद्ध उनका तर्क है - "जो मुक्ति में जीव परमात्मा में लय हो जाये, तो मुक्ति का सुख कौन भोगेगा और मुक्ति के जितने साधन हैं, वे सब निष्फल हो जायेंगे। इसलिए जीव का परमात्मा में लय होना मुक्ति नहीं, अपितु उसका प्रलय या नाश समझना चाहिए।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द जी मुक्ति में जीव का परमात्मा में लय होना नहीं मानते। उनके अनुसार मुक्ति में जीव की सत्ता ब्रह्म से पृथक् और स्वतन्त्र बनी रहती है। महर्षि दयानन्द जी अपने कथन के समर्थन में तैत्तिरीयोपनिषद् (आनन्दवल्ली अनु. १/खं. १) का निम्न प्रमाण प्रस्तुत करते हैं-

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्।
सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चितेति।।

जो जीवात्मा अपनी बुद्धि और आत्मा में स्थित सत्य ज्ञान और अनन्त आनन्दस्वरूप परमातमा को जानता है, वह उस व्यापक रूप ब्रह्म में स्थित होकर उस 'विपश्चित्' अनन्त विद्या युक्त ब्रह्म के साथ सब कामों को प्राप्त होता है।

चार्वाक चैतन्ययुक्त शरीर को आत्मा मानता है। इसलिये उसके मत में शरीर के साथ आत्मा की मृत्यु ही मुक्ति है- 'मरणम् एवं अपवर्गः।' इसी तरह बौद्धों के अनुसार भी आत्मा की कोई स्थायी सत्ता नहीं है। वह रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान- इन पाँच स्कन्धों का मेल (संघात) है। निर्वाण या मुक्ति मिलने पर पाँचों स्कन्धों का मेल खत्म हो जाता है। इसी से बौद्ध-दर्शन में निर्वाण का अर्थ बुझ जाना किया है। महर्षि दयानन्द जी को ये दोनों विचार मान्य नहीं हैं। इसलिए इनकी समालोचना करते हुए वे लिखते हैं - "जो जीव के नाश ही को मुक्ति समझते हैं, वे तो महामूढ़ हैं, क्योंकि मुक्ति जीव की यह है कि दुःखों से छूटकर आनन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, अनन्त परमेश्वर में जीवों का आनन्द में रहना।" महर्षि दयानन्द जी की यह समालोचना ठीक है क्योंकि यदि मुक्ति में जीव का नाश हो जाता है, तो ऐसी मुक्ति पाने के लिए पुरुषार्थ कौन करेगा? यदि मुक्ति में जीव की सत्ता खत्म हो जाती है, तो उस अवस्था में किसके दुःख का नाश हुआ और फिर मुक्ति का आनन्द कौन भोगेगा? इसलिए ऐसी मुक्ति को दुःखों का नाश न कहकर यदि जीव का नाश कहा जाये, तो कोई दोष नहीं है।

हमारे पौराणिक भाइयों का विश्वास है कि मुक्ति प्राप्त किये हुए जीव स्वर्ग में रहते हैं। स्वर्ग ऊपर आकाश की ओर है। इसी प्रचलित धारणा के अनुसार जैनी भाई स्वर्ग को ऊर्ध्वलोक अर्थात् ऊपर आकाश की ओर स्थिति सिद्ध शिला पर मानते हैं तथा ईसाई और मुसलमान भाई चौथे और सातवें आतमान पर मानते हैं। इनके स्वर्ग में स्त्रियों, मद्यमांस आदि सांसारिक भोग विलास की सारी चीजें उपलब्ध हैं।

क्रमशः

पृष्ठ २ का शेष

उसमें ही पुत्री गमन का दोष ब्रह्मा जी पर लगाया गया है। यही नहीं अन्य भी जो जो दोष लगाये गये उनको कहता हूं।

१. ब्रह्मा जी पुत्रीगामी थे। श्रीमद्भागवत् स्कन्ध ३ अध्याय १२।२८-२६,

२. ब्रह्मा जी का वीर्यपात

३. ब्रह्मा जी पांच सिर थे। शिवपुराण विद्येश्वरी संहिता अध्याय ८ श्लोक ४ तथा ७,

1. श्री ब्रह्मा जी पर पुत्रीगमन का घृणित दोषारोपण -

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयं भूर्हरतींमनः।
अकामां चसे छलः सकाम इति न श्रुतम्।।२८।।
तमधर्मेकृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः।
मरीचि मुख्याः मुनयो विश्रम्भात् प्रत्यबोध यन्।।२६।।
नैतत पूर्वै कृतं त्वधै न करिष्यन्ति चापरे।
यत्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्यांगजां प्रभुः।।३०।।

श्रीमद्भागवत् पुराणं स्कंध ३ अध्याय १२ श्लोक २८-२६-३०,

टीका- हे विदुर ! वाणी से श्रेप्ठ देह वाली सरस्वती हुई, कि जिसे देखकर ब्रह्मा जी ने काम के वशीभूत होकर उसके साथ काम की इच्छा की ऐसा ही मैंने सुना है।

सम्पूर्ण पुत्र मरीचि आदि ऋपियों ने अपने पिता की खोटी बुद्धि देखकर समझाया। कि ऐसा पहले किसी ने नहीं किया और न कोई करेगा कि जो तुम अपने अंग से उत्पन्न हुई पुत्री को ग्रहण करते हो यह ग्रहण करने योग्य नहीं है।

ब्रह्मा जी के पांच सिर थे -

३. शिवजी की आज्ञा से भैरव ने उन पांच सिरों में एक को काट दिया, देखिये-महादेव द्वारा ब्रह्मा जी का अभिमान दूर करना -

ससर्जाथ महादेवः पुरुषं कंचिदद्भुतम्।
भैरवाख्यं भ्रुवोमध्याद्ब्रह्म दर्पं जिघांसया।।१।।
सवै तदा तत्रपतिं प्रणम्य शिवमंगणे।
किं कार्यं करवाण्यत्र शीघ्रमाज्ञापय प्रभो।।२।।
वत्सपोऽयं विधिः साक्षाज्जगतामाद्यदैवतम्।
नूनमर्च्चय खड्गेन तिग्मेन जवसा परम् ।।३।।
सवैगृहीत्वैक करेण केशं, तत्पंचमंदृप्तमसत्य भाषिणंम्।
छित्वा शिरोह्यस्य निहन्तुमुद्यतः प्रकम्पयन खड्गमतिस्फुटं करैः।।४।।
पिता तवोत्सृष्ट विभूषणांवर स्त्रगुत्तरीयामलकेश संहतिः।
प्रवातरंभेव लतेव चंचलः पपात वै भैरव पाद पंकजे।।५।।
तावद्विधिं तात दिदृक्षुरच्युतः कृपालुरस्मत्प्रतिपाद पल्लवम्।
निषिच्य वाष्पैरवदत्कृताञ्जलिर्यथाशिशुः स्वपितरं कलाक्षरम्।।६।।

शिवपुराण विद्य सं. १ अध्याय ८ भाषा टीका वाले का पृष्ठ १३ (वैंकटेश्वर प्रेस बम्वई से प्रकाशित)

अर्थ- तब महादेव जी ने ब्रह्मा जी का मद दूर करने के लिए भृकुटी के मध्य से एक अद्भुत पुरुष भैरव की रचना की। उत्पन्न होते ही समरांगण में उस पुरुष ने शिवजी को प्रणाम किया। और कहा भगवन्। मैं क्या करूं? शीघ्र आज्ञा दीजिये।

शिवजी ने कहा- हे वत्स, यह जो जगत् के आदि देवता ब्रह्मा है, तीक्ष्ण धारवाले वेगवान खड्ग से इनकी अर्चा (पूजा) करो अर्थात् इन पर प्रहार करो।

(क्रमशः)

आर./आर. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S
०५-११/६/२०१७
भार- ४० ग्राम

सितम्बर 2017

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2015-17
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१५-१७
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2015-17

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

— दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

पुस्तक/पत्रिका

श्री ....
ग्राम ....
डा० ....
जिला ....

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।